
नये
मुसाफिर
मार्कण्डेय

137

रामप्रकाश कपूर

नये मुसाफिर

रामप्रकाश कपूर

सन् १९३५ में डेहरी आन-सोन में जन्मे रामप्रकाश कपूर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के स्नातक (एम. ए.) हैं। आपने अब तक चार उपन्यास, एक कहानी संग्रह, एक समालोचना ग्रंथ, तथा दो बाल-साहित्य की पुस्तकें लिखी हैं। कहानी संग्रह 'हरसिंगार के फूल' उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत। संप्रति वाराणसी के प्रमुख व्यवसायी।

प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो॰ बा॰ १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१००१

નયે મુસાફિર



भारत के प्रथम बुक क्लब
प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो० बा० १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१००१ के लिए
विजय प्रकाश बेरी द्वारा प्रकाशित तथा
भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित
सन् १९७६

Ram Prakash Kapoor
NAYE MUSAFIR
Novel

मूल्य : ३.००

१

होटल ओबेराय, नयी दिल्ली।

कमरा नम्बर सत्ताईस।

'खट्-खट्।'

घड़ी की दोनों सूइयाँ एक दूसरी का कसकर आलिङ्गन किये हुए थीं। ठीक सवा तीन बज रहे थे। तीन बजे का एपाइण्टमेण्ट था। इतनी दूर से आने में पन्द्रह मिनट लेट हो जाना गैरमुमकिन नहीं कहा जा सकता।

'खट्-खट्' दूसरी दस्तक!

बेयरा बरामदे के दूसरे छोर से दौड़ता आया।

"गुड आफ्टर नून, साहब!"

सर हिलाया।

"आज सबेरे शेखर साहब यहाँ आया है न?

बेयरा ने सूखे होंठों पर जीभ का गीला ब्रश फेरते हुए कहा, "यस सर। नाम नहीं जानता, एक साहब सवेरे आठ बजे इसमें आया था। गोरा-चिट्टा गबरू जवान है। सिगरेट बहुत पीता है। तीन पैकेट सिगरेट अभी तक मैं दे चुका हूँ।....'

"वेटर!" एक यूरोपियन लेडी ने पुकारा।

"एक्सक्यूज़ मी सर!" वह उधर की तरफ भागा।

तीसरी बार दस्तक देने से पहले मेरा ध्यान कॉल-बेल की तरफ गया, जिसके ऊपर रङ्ग से लिखा था, "पुश मी!" मैंने घण्टी दबाया।

"हैलो, कौन। रमेश....!" शेखर चिल्लाया।

"यह भी कोई सोने का टाइम है।"

"आई बेग योर पार्डन! जरा पाँच मिनट रुकना।"

"ओ० के०!"

रमेश बरामदे में टहलने लगा। तीसरी मञ्जिल से नीचे अर्द्ध-वृत्ताकार सड़क का दृश्य बहुत सुहावना प्रतीत हो रहा था। मोटर-टैक्सी व बसों की लम्बी कतार, एक क्यू में रफ्तार से भागी जा रही थी। रफ्तार, गति, भागदौड़···· यही जिन्दगी है ?····

सुगन्ध से लगा वसन्त आ गया।

रमेश का ध्यान बँटा। एक सुन्दरी ट्रे में पानी का जग व दो कोकाकोला की बोतलें लेकर सामने से गुज़री।

घण्टी बजी।

"यस····!"

कमरा खुला। एक अधेड़ दीखनेवाले जर्मन नवयुवक ने मुस्कराकर दरवाजा खोला। लचकती हुई लड़की अन्दर घुसी। दरवाजा बन्द हो गया।

रमेश को बिजली का करेण्ट लगा। शॉक से माथा झनझना उठा। कॉल-बेल····, कॉल गर्ल !!

दो मिनट बाद ही दरवाजा खुला। उस लड़की के हाथ में खाली ट्रे थी। दूसरे हाथ से वह अपना गाल सहला रही थी। उसकी मुट्ठी में एक हरा नोट झाँक रहा था, शायद पाँच का था। एक चुम्बन के पाँच रुपये कम तो नहीं होते ?

घृणा से रमेश का मुँह कड़ुआ हो गया। थूकने की इच्छा हुई, मगर कीमती कालीन देखकर साहस नहीं हुआ।

तभी शेखर ने आवाज दी; "हैलो रमेश।"

वह आगे वढ़ा। शेखर ने कसकर बाँहों में जकड़ लिया।

"हैपी बर्थ-डे टू-यू····! जन्म-दिन मुबारक हो !" रमेश बोला।

शेखर हाथ पकड़कर अन्दर ले गया। टेबुल पर विलायती शराब की बोतलें लगी थीं। कुर्सी पर रमेश को बिठाकर शेखर बिस्तर की सलवटें ठीक करने लगा।

सामने श्रृङ्गारदान पर कुछ हरी काँच की चूड़ियाँ, एक गले का हार और तीन-चार अँगूठियाँ करीने से सजी थीं। रमेश की समझ में कुछ न आया। मगर, टेबुल पर पड़ी लेडीज़ वाच ने सारा रहस्य खोल दिया।

रमेश ने अर्थभरी नज़रों से शेखर को देखा।

शेखर पलङ्ग के गद्दे में धँसता बोला, "सिगरेट पियोगे ?"

"तुम तो जानते हो....!"

"हाँ, मैं तो भूल ही गया था, आप प्रयाग के पण्डित हैं।" कहते हुए उसने बेफिक्री से सिगरेट सुलगायी।

रमेश ने साहस किया, "एक बात पूछूँ ?"

"इसके लिए भी 'परमिशन इन राइटिंग' चाहते हो क्या ?"

"तुम बड़े धोखेबाज हो। चुपचाप शादी कर ली और हमें खबर भी न दी!" रमेश ने उलाहना दी।

"क्या बात करते हो।" शेखर बोला, "सपना तो नहीं देख रहे हो! मेरा एक ही तो यार है, उसके बिना शादी हो भी कैसे सकती है! तुम्हें लॉ-कालेज की वे शामें भूल गयीं, जब हम दोनों दूसरों से 'प्रॉम्सी' करवाकर कैण्टीन में चाय की चुस्कियाँ लेते थे।....मैं तुमसे कहता था न कि मेरी शादी में तुम्हें घोड़ी के आगे नाचना होगा!"

"मगर फिर यह चूड़ियाँ, हार, अँगूठी और लेडीज़ वाच किसकी हैं ?" रमेश उत्सुकता दबा न सका।

शेखर ने बड़ी जोर का ठहाका लगाया। दो-चार मिनट तक हो-हो कर हँसता ही रहा।

"वकील साहब, अरे माफ करना....एडवोकेट साहब, हमारे जैसे 'क्रॉनिक-बैचलर' को बीवी कहाँ नसीब ? हम तो क्वाँरे ही पैदा हुए थे, क्वाँरे ही दुनिया से जायेंगे ?...."

उसी समय दरवाजा खुला। बाथरूम से एक लम्बी साँवली इकहरे बदन की लड़की निकली। कँटे बालों के बीच गर्दन पर ताजा लगा पाउडर चमक रहा

था। होंठों पर सुर्ख लिपस्टिक थी। फिरोजी रङ्ग की साड़ी बड़ी तरतीब से बाँधी गयी थी। उसकी चाल में भी एक लचक, एक 'रिद्म' था।

रमेश सम्मान में उठ खड़ा हुआ। हाथ जोड़े, "नमस्ते !"

"बैठिये।" वीणा के तार-जैसे मधुर स्वरों में वह बोली, "आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई। शेखर साहब तो हर वक्त आपकी तारीफ किया करते हैं ! इनका इतनी बड़ी दुनिया में एक ही....!"

रमेश ने शेखर की तरफ अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा।

शेखर ने तुरन्त परिचय दिया, "माई गर्ल-फ्रेण्ड, छवि विश्वास !"

रमेश को लगा जहाँ छवि हो, वहाँ अविश्वास का क्या काम ?

"आई-एम सॉरी !" रमेश सङ्कोचपूर्वक बोला, "मैंने आप लोगों को डिस्टर्ब ही किया !"

"नो....नो। मैं तो ढाई बजे से ही कह रही थी, कपड़े पहनकर तैयार हो जाओ। तुम्हारे फ्रेण्ड तीन बजे आनेवाले हैं। मगर यह जरा बेहद अलहदी हैं।" छवि बोली।

रमेश ने जब एक बार पुनः बेवक्त आने पर अफसोस प्रकट किया, तब शेखर रोब से बोला, "यार मैं जन्म-दिन मनाने को यहाँ आया था, कोई 'हनीमून' के लिए थोड़े आया था जो तुमने मुझे डिस्टर्ब कर दिया हो ?'

उसकी बात पर रमेश के साथ छवि भी खिलखिला पड़ी।

एक पेग चढ़ाते हुए शेखर बोला, "तुम तो जानते हो मेरे कितने यार हैं ? अगर सबको जन्म-दिन की खबर लग जाये, तो एक दिन में हजार रुपये की ह्विस्की ही सब पी जायें। इसीलिए मैं यहाँ सबसे छुपकर बैठा हूँ।"

"फिर मुझे टेलीफोन पर क्यों खबर दी !"

"क्योंकि तुम एकदम भगत हो, 'हार्मलेस क्रीचर' !" सिगरेट का लम्बा कश लेकर, छवि के मुँह पर धुँआ छोड़ता वह बोला।

"दिल्ली में रहते हुए भी आज होटल में क्यों मेहमान बने ?" रमेश ने जिज्ञासा की।

शेखर ने छवि को अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा। एक क्षण रुककर बोला, "माता-जी से कह दिया आज कम्पनी के काम से मेरठ जाना है। सुबह आठ बजे अटैची लेकर घर से निकला। मिस विश्वास से पहले ही एपाइण्टमेण्ट ले लिया था। साढ़े आठ बजे 'रीगल' पर इन्हें साथ लिया। फिर यहाँ आकर तम्बू लगा दिया।"

"मगर यह तो सिंगल रूम है।" कुछ झिझकते हुए रमेश ने पूछा, "तुम्हारे साथ इन्हें कैसे····।"

"माई फ्रेण्ड, यह नयी दिल्ली है। 'मनी' सब कुछ करवाता है। अगर तुम चाहो, मैं यहाँ बैठे तुम्हारे लिए भी इन्तजाम कर सकता हूँ। जिस होटल में कहो, अशोका, इम्पीरियल, जनपथ, लोदी····सिर्फ जेब में चिट्टे नोट होने चाहिए। नथिंग इम्पॉसिबुल ! यहाँ हर चीज खरीदी जा सकती है।····"

छवि विश्वास के माथे पर पसीने की बूँदें चमक उठीं। उसे बातों का रुख अरुचिकर लग रहा था। उसने शेखर को ताड़ना दी, "यू मे परचेज हेवेन, बट नॉट मी। (तुम स्वर्ग भी खरीद सकते हो, मगर मुझे नहीं !)

शेखर ने अपनी ग़लती महसूस की तथा दाँतों से जीभ काट ली।

"आई ऐम सॉरी, मैडम। मैं भूल गया था कि तुम भी बैठी हो।····तुम्हारे घर तो मेरे जैसे खानसामें और नौकर काम करते हैं। मेरी क्या हस्ती तुम्हें खरीदने की ?"

शेखर ने भूल सुधारी, "इनकी तीन फैक्टरियाँ हैं, कनॉट-प्लेस में दो बड़ी इमारतें हैं। दस हजार रुपया महीना तो सिर्फ किराया आता है। इनकी बड़ी बहन डाक्टर हैं, इंगलैण्ड रिटर्न। मेरी तरह वे भी क्रॉनिक बैचलर हैं। इनके दो भाई हैं। बड़ा मिलिटरी में इञ्जीनियर है, आजकल नेफ़ा में पोस्टेड है। छोटा भाई इङ्गलैण्ड में 'बार-एट लॉ' करने गया है।····वेरी हैपी····स्मॉल फैमिली !"

रमेश ने नयी दृष्टि से छवि को निहारा। जहाँ 'कॉल-बेल लगी होती है, वहाँ सभी 'कॉल-गर्ल' ही नहीं होती ?

शेखर 'मूड' में था—'इन्होंने मिराण्डा कॉलेज से पिछले वर्ष 'बी० ए०' किया, म्यूजिक में डिप्लोमा भी है। शी इज़ रेडियो-सिंगर एज़ वेल। (यह-

रेडियो गायिका भी हैं ।) आर्ट में भी थोड़ी दखल है । समझ लो, कला की साकार प्रतिमा हैं । व्हाट ए नाइस कम्बीनेशन....! नाक-नक्श भी भगवान ने फुर्सत से बनाये हैं, मगर भातवाले देश बङ्ग-भूमि में मिलने के कारण, रङ्ग फूल का जरा साँवला हो गया । अगर गेहूँ के देश पंजाब में इस 'माछी-झील' का जना होता, तो इसकी क्या बहार होती ? गोरी चिट्टी होती, शरद् चन्द्रिका-सी धवल !....'

छवि को मजाक बुरा लगा । बोली, "अगर तुम्हारी आँखों की पुतलियाँ काली न होकर सफेद होतीं, तो तुम कितने सुन्दर लगते ?"

"बुरा मान गयी न, औरत की जात ही कमबख्त कुछ ऐसी होती है ।" ऐश-ट्रे में सिगरेट का टुकड़ा दबाते शेखर बड़बड़ाया, "तारीफ करो तो फूलकर गोलगप्पा । नहीं तो फिर एकदम पारा गर्म । लड़की कितना क्यों न पढ़-लिख ले, मूल नारी संस्कार पीछा नहीं छोड़ते ।"

"अच्छा, नाऊ स्टाप ऑल नानसेंस !" छवि की भौं में बल पड़ गये । बोली, "बोर मत करो, जल्दी तैयार हो ।

शेखर 'टावेल' लेकर बाथरूम में गया । उसने अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया ।

कमरे में रमेश को छवि के पास होते हुए भी बड़ा अकेलापन महसूस होने लगा । तरह-तरह के विचार, तर्क-वितर्क मस्तिष्क को मथने लगे ।

छवि ने ही मौन तोड़ा,—"आप दिल्ली कब तक रुक रहें हैं ?"

"कल से 'केस' की हियरिंग शुरू हो रही है ! ज्यादा-से-ज्यादा एक सप्ताह और !" रमेश बोला ।

"भाभी को भी साथ लाये हैं क्या ?"

रमेश को यह सम्बोधन आत्मीय लगा । प्रकृतस्थ होता बोला,—"अजी कहाँ, यहाँ तो रोज ही प्रोफेशनल काम से आना-जाना लगा रहता है । फिर उनके साथ बच्चों की फौज भी तो है....!"

"ओ आई सी !" छवि ने घड़ी कलाई में बाँध ली थी । अँगूठियाँ भी पहन ली थीं । इस वक्त शीशे के आगे खड़ी होकर वह अपना जड़ाऊ नगों का हार पहन

रही थी। उसका पल्ला नीचे गिर गया था। शीशे में प्रतिच्छवि देखकर रमेश सिहर उठा। कितना सुडौल शरीर है। कभी उसकी पत्नी की भी ऐसी ही आकर्षक देहलता थी, मगर तीन बच्चों ने ही जैसे उसका सारा यौवन निचोड़ लिया।

छवि सामने की मसहरी पर बैठती हुई बोली, "क्या आप शादी के बाद सुखी हैं!"

रमेश इस प्रश्न के लिए तैयार न था। फिर भी सम्हलता बोला,—"सुख की परिभाषा ही आज तक मैं नहीं जान पाया, मगर हाँ 'सन्तुष्ट' जरूर हूँ!"

इसका मतलब आपने 'कम्प्रोमाइज़' कर लिया हैं। यह तो कमजोरी का लक्षण हैं। आप खाने की मेज पर 'अँगूर' चाहते हैं, मगर भुने चने ही मिल गये तो आप ने संतोष कर लिया। दिस इज़ नो लाइफ....जिन्दगी में फिर नवीनता कहाँ रही ? 'एडजस्टमेण्ट अपने आप में अच्छी चीज हो सकती हैं, लेकिन 'इटक्लियर'....'प्लेजर'....हैपिनेस ऑफ लाइफ !" छवि ने सुरीले स्वर में कहा।

रमेश ने सीधे पूछ लिया,—"शादी के बारे में आप के क्या विचार हैं?"

दातों के सफेद फूल चमके। छवि की आँखों में जैसे एक नयी ज्योति आ गयी। बोली, "यह तो सफर का अन्तिम पड़ाव हैं। कुछ लोग यहाँ से सफर प्रारम्भ करते हैं। मगर मेरे विचार से यह 'नेगेटिव' 'एप्रोच' है ! यह तो ऐसे ही हुआ, जैसे मृत्यु को ही कोई व्यक्ति जीवन का प्रारम्भ मान ले।"

रमेश ने बीच में हस्तक्षेप किया,—"आपके विचार में 'शादी' और 'मृत्यु' दोनों जीवन के अन्तिम सोपान हैं।"

"नहीं, मेरा मतलब आप नहीं समझ सके !" छवि ने स्पष्ट किया, "आपको भूख लगती है, इसलिए आप 'श्रम' करते हैं और 'उपार्जन' या 'उत्पादन' करते हैं। मगर यदि आपको 'भूख' ही न लगे, तो फिर आप क्यों श्रम करेंगे ? आप किसी को भरपेट भोजन दे दीजिए, वह क्यों काम करने जायेगा ? शादी के बाद तो मनुष्य स्वभावतः आलसी, सन्तोषी और आत्मतुष्ट बन जाता है। उसका जीवन मशीना हो जाता है। उसे हर चीज 'सहज' रूप से प्राप्त हो जाती

हैं, जीवन का आकर्षण ही समाप्त हो जाता है। सच पूछिये तो जीवन की गठरी, परिवार का बोझ''''पत्नी व बच्चे वह कठिन भार की तरह ढोता है और धीरे-धीरे, तिल-तिलकर घुलता जाता है और एक दिन समाप्त हो जाता है।''

''आप शायद स्वच्छन्द भोग की वकालत कर रही हैं ?''

''आपका प्रश्न गलत है। लगता है, कचहरी में निरापराधी को अपराधी सिद्ध करने-करते, आप वाक्चातुरी द्वारा 'सत्ता' को स्वीकार नहीं करना चाहते।'' छवि ने तर्क किया, ''आप जीवन को सीखचों में जकड़ दीजिए, उसका स्वाभाविक विकास रुक जाएगा। चीन में औरतों के पाँव छोटे रखने के लिए, छोटी बच्चियों के पाँव लोहे के जूतों में कस दिये जाते हैं। भारत में नारी को यौवन के प्रथम चरण में ही, या कहिये कली को फूल बनने से पहले ही, सुरक्षा के नाम पर 'पति' नामधारी अपरिचित व्यक्ति के चरणों पर जबरन अर्पित कर दिया जाता है। पति शासक होता है, पत्नी शासित। पति स्वामी होता है, पत्नी चरणों की दासी। पत्नी का स्वर्ग, पति के लिए बलि का बकरा बनने में हैं। 'सेक्स' के क''''ख''''ग''''से अपरिचित पति-पत्नी, स्वयं जीवन को नरक की भट्ठी में भस्म करते हैं। जिस प्रकार प्यास लगने पर, पानी सहज प्राप्त हो जाता है''''''''उसी प्रकार हर रात पति की इच्छा की पूर्ति के लिए पत्नी को उसकी अंकशायिनी बनना पड़ता है। इच्छा-अनिच्छा का प्रश्न नहीं उठता। टाइम-टेबुल में अगर पाठ्य-क्रम में अंग्रेजी, हिन्दी एवं गणित अनिवार्य विषय हैं, विद्यार्थी न भी पढ़ना चाहे, मगर उसे गणित की घुट्टी पीनी पड़ती है''''उसी प्रकार पत्नी भी लाचार है।''''''''और नारी, जिसकी तथाकथित गरिमा से शास्त्र भरे पड़े हैं''''''''मात्र बच्चा जनने की एक साधारण मशीन बन जाती हैं। और हम हैं, मातृत्व को नारी का सर्वोच्च विकास मानकर उसकी वंदना करने में अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेते हैं। आज तक किसी ने क्या उसके पत्नी रूप की कभी भी भूल से प्रशंसा की है ?''''

इसी वक्त बाथ-रूम से शेखर निकला। सहज स्वर में बोला, ''क्या बहस हो रही है। अरे भाई, मैंने तो छवि को 'ला' ज्वाइन करने की नेक सलाह बहुत पहले ही दी थी''''।'' फिर वह कपड़े पहनने लगा। रमेश के कुछ कहने से पूर्व ही

छवि ने अपनी बात जारी रखी, "संविधान में नारी को पुरुष के समकक्ष स्थान दिया गया है, मगर यह बहुत बड़ा झूठ है। नारी आज भी भारत में गुलाम है। उसे स्वच्छंद विकास का अवसर ही कहाँ मिलता है ? उसकी इच्छा-अनिच्छा का प्रश्न ही कहाँ उठता है।"

रमेश ने टोका, "अगर नारी को स्वतंत्रता न होती तो शायद आप आज यहाँ शेखर के पास एकांत कमरे में नहीं होतीं ?"

इस बार छवि कुछ उत्तेजित हो उठी। वह पलंग पर कुछ आगे खिसक आयी। बोली, "एक्सक्यूज मी, अगर आपको पता चले कि आपकी पत्नी का कभी कोई फ्रेण्ड था, जिसके साथ आपकी पत्नी ने दिन या रात में कभी एकान्तवास किया था, तो आपकी उसके प्रति क्या भावनाएँ होंगी ?....तीन या चार बच्चों की माँ को आप चरित्रहीन का फतवा देकर, घर से निकालने में कितनी देर लगाएँगे ?"

रमेश इस प्रहार के लिए तैयार न था।

छवि बोलती रही, "मैं जानती हूँ, शादी से पहले और बाद भी, कितने सुशिक्षित लोग अपन: हविश मिटाने के लिए, वेश्याओं के कोठे पर जाते हैं। मगर क्या किसी भारतीय नारी ने अपने पतिदेवता को 'चरित्रहीन' सम्बोधित करने मात्र का साहस प्रकट किया है, 'तलाक' देने की कल्पना तो दूर की बात रही। क्योंकि वह बचपन से ही सुनती आयी है–पति परमेश्वर है। उसके साथ जीवित चिता में जलने में ही उसकी मुक्ति है। अगर पति वेश्यागामी है, तो सती नारियाँ उसे वेश्या के कोठे तक पहुँचा कर आती थीं। यह रहा काल्पनिक आदर्श ! दूसरी ओर गौतम-जैसे तपस्वी एवं संयमी ऋषि भी, पत्नी अहिल्या, को मात्र सन्देह के कारण जड़वत्, पत्थर बनाने को उद्यत रहते हैं। बीसवीं सदी में आज भी नारी सीने पर पत्थर रखकर मृत्यु का आलिंगन कर रही है। कहाँ हैं राम, और अगर वे फिर से जन्म भी ले लें, तो कितनी नारियें का उद्धार करेंगे ?...."

"हियर....हियर....!" शेखर ने कंघी मेज पर पटककर तालियाँ पीटीं।

रमेश उठ खड़ा हुआ। बोला, "वाह, आप तर्क अच्छा कर लेती हैं !"

× × ×

शेखर ने रमेश को पूरा होटल ओबेराय घुमाया। जिसने इन्द्र का राज-महल न देखा हो, वह पृथ्वी पर इसे अवश्य देख ले। लगता है, जैसे भारत का सारा ऐश्वर्य सिमटकर यहाँ एकत्र हो गया हो। कहाँ है भारत में गरीबी, किधर है सूखा व अभाव का नग्न ताण्डव ? यहाँ तो सब उजला है, स्वच्छ है। सिर्फ 'किंग' व 'क्वीन' हैं। प्रजा का कहीं नाम नहीं।.........।"

शेखर ने टोका—"तुम 'क्वीन' से मिलना चाहती हो ?

छवि धन्यवाद देकर अन्दर चली गयी।

रमेश ने शेखर को प्रश्नवाचक नेत्रों से देखा।

"भाई, साधारण होटलों में 'लेडीज' व 'जेन्ट्स' होते हैं, यहाँ 'किंग' व 'क्वीन' क्लोक-रूम हैं !" शेखर ने समझाया।

रमेश हँसी न रोक सका। शेखर तेजी से उसका हाथ पकड़कर भागता-सा आगे बढ़ा।

"आओ, तुम्हें एक 'ब्यूटी' से मिलाएँ।" कमबख्त कहीं जल्दी वापस न आ जाए !"

बुक-स्टाल में घुसा ! रमेश स्तब्ध ! चित्र है या नारी-प्रतिमा। इतना रूप इस धरती पर भी हो सकता है ? रमेश ने जीवन में इतनी सुन्दर रमणी इससे पूर्व कभी न देखी थी। लगता है, इन्द्र के दरबार की कोई अप्सरा है जो गलती से इस होटल में आ गयी है। शायद उसे भी यहाँ इन्द्र-दरबार का भ्रम हुआ हो ?"

तभी छवि ने आवाज दी—"डार्लिङ्ग !"

"हैलो !"

शेखर शरमा गया। छवि ने उसे रंगे हाथों पकड़ा। धीरे से आगे चलते फुसफुसायीं, "बहुत पसन्द हो तो रिश्ते की बात करूँ !"

"तोबा, मारना चाहती हो क्या ?" शेखर हाथ जोड़ता बोला, "तुम जरा अच्छे नाक-नक्श की हो, तो गला फाड़कर नारी स्वतन्त्रता का ढोल पीटती हो। और वह संगमरमर की मूरत तो हुस्न के नाज में पति को पांव की जूती समझेगी। मेरा काम फिर दरवाजे के बाहर बैठकर, मेमसाहब से मिलने आने-

वालों का रजिस्टर में नाम लिखने का होगा। कौन देगा ऐसी लम्बी ड्यूटी ? इससे अच्छा है, हम क्वाँरे पैदा हुए, क्वाँरे ही मर जाएँ....।"

इस व्यंग्य से छवि तिलमिला उठी। मगर कुछ सोचकर चुप लगा गयी।

सामने यूनाइटेड बैंक का दफ्तर था। बगल में इंडियन एयरलाइन्स का छोटा-सा आफिस था। दीवारों पर नीचे से ऊपर तक सन-माइका की चादरें जड़ी हुई थीं। दूर से देखने में संगमरमर से भी ज्यादा आकर्षक लग रही थीं। सफेद चिकनी दीवारों में काली छाया, संगमरमर की स्फटिक शिलाओं से भी ज्यादा सुन्दर लग रही थी। चिकनी इतनी जैसे किसी नवयौवना की देहलता हो।

सामने शीशे के बड़े किवाड़ खुले। लगा तिलस्म खुल गया। नीचे स्वीमिंग-पूल था। बालकनी से नीचे का दृश्य देखतें ही बनता था। लगता था, पेरिस या स्विटज़रलैण्ड का एक टुकड़ा हो। गहरा नील जल उसमें तैरती उजली जल-परियाँ। चारों ओर अर्द्धनग्न स्त्री-पुरुष, तैरने की पोशाक पहने विश्राम कर रहे थे। कोई धूम्रपान कर रहा था, कोई कोका-कोला की बोतल 'सिप' कर रहा था, कोई कॉफी की गर्म चुस्कियाँ ले रहा था।

शेखर ने छवि की बाँह पकड़ी और कहा, "इधर देखो।"

"एक अधेड़ मोटा फ्रेंच-सा दीखता बूढ़ा, एक षोड़शी आंग्ल महिला की गोद में सर रखकर पड़ा था। तरुणी बार-बार झुककर उसके कपोल, आँखें, नासिका और होंठ चूम लेती। कभी अधेड़ व्यक्ति उसकी नंगी पीठ को बाँहों के घेरे में लेकर, उसे अपने ऊपर अर्ध-वृत्ताकार झुका लेता।

दूसरी ओर एक भारतीय सुन्दरी, किसी श्वेत विदेशी नवयुवक की गोद में सर रखे, मुँदी पलकों पर, डूबते सूर्य की किरणों का सुखद स्पर्श प्राप्त कर रही थी।

एक भारतीय जोड़ा तैरने की पोशाक में सीढ़ी से ऊपर कूदने के लिए चढ़ा। मगर पति-पत्नी या प्रेमी-प्रेमिका में तकरार शुरू हो गयी। पुरुष कहता, स्त्री पहले कूदे। स्त्री का आग्रह था, वह पुरुष पहले छलांग लगाये। पुरुष ने स्त्री की कमर में बाँह डाली और अपने साथ जबरदस्ती उसे घसीटते हुए छलांग

लगा दी । सभी देशी-विदेशी जोड़ों ने खुशी से तालियाँ बजायीं । औरत नाराज हो गयी । उसने पुरुष पर पानी के छींटें उड़ाने शुरू किये । पुरुष ने भी तुरन्त उत्तर दिया । औरत का पारा और तेज हो गया ।

वह तैरकर झट एक ओर बाहर निकली । एक रूसी नवयुवक लेटे-लेटे सिगरेट पी रहा था । उसने उससे जाकर कुछ कहा । वह हाथ पकड़कर झट उठ खड़ा हुआ । उसने औरत की कमर में हाथ डाला और दोनों डुबकी मारने के लिए हँसते हुए, सीढ़ी की ओर जाने लगे ।

पुरुष ईर्ष्या से सुलग उठा । वह भी झट पानी से बाहर निकला । सामने एक बूढ़ी, कसे बदन की गोरी महिला खड़ी थी । उस महिला ने उसकी ओर सांत्वना का हाथ आगे बढ़ाया । पुरुष ने झेंप मिटाने को बढ़े हाथ को थाम लिया । महिला ने उसका हाथ चूमा और फिर उसके साथ नीचे से ही छलांग लगा दी ।

रूसी नवयुवक अच्छा तैराक था । उसने भारतीय महिला को कमर से पकड़कर दोनों हाथों से ऊपर हवा में उठाया । मगर शायद वह डर गयी । इसलिए फिर खड़ा कर दिया । उसने फिर अपनी पीठ 'पूल' की तरफ कर ली, अपनी बाँहों में महिला को कस लिया और फिर उल्टी सर के बल दो कलइयाँ खाकर शानदार डुबकी मारी ।

सभी ने प्रशंसा में तालियाँ बजायीं । मगर, बेचारे पुरुष की दशा देखते ही बनती थी, जो शायद आधुनिक न होते हुए भी, आधुनिक होने का प्रयत्न कर रहा था । लेकिन, अपनी पत्नी या प्रेयसी को दूसरे नवयुवक के साथ, जो उल्टा पीठ के बल लेटकर, अपने पेट पर उसे लेटाये तैर रहा था, और जो शांति-पूर्वक उसके वक्ष पर लेटी, अपनी थकान मिटा रही थी····भला फूटी आँखों भी कैसे देख सकता था ?····

रमेश ने छवि को टोका, देखो, नारी-स्वाधीनता या स्वच्छंदता का यह रूप कितना सुखद है ?

शेखर ने दूसरी ओर इंगित किया । बात बीच में कट गयी ।

स्वीमिंग-पूल के दक्षिणी किनारे पर खुला रेस्तराँ था। लोग वहाँ बैठकर नाश्ता करते, कॉफी पीते तथा 'स्वीमिंग-पूल' में सशरीर स्वयं न तैरकर, अपनी आँखों की मछलियों को जल-परियों के साथ तैराते। इससे कलेजे में ठंढक पड़ती और शरीर में गर्मी भी आ जाती। छोटे-बड़े बिजनेस-मैगनेट; ठेकेदार, भ्रष्टाचारी सरकारी अफसर जो खुद तैरना नहीं जानते थे, या जिनकी तोंदे गुब्बारों की तरह हराम का खाते फूल गयी थीं एवं जो 'स्वीमिंग कस्ट्रपम' में एक विदूषक की तरह हास्यास्पद लगते, वे शान से बैठकर कॉफी पीते हुए ही तैरने का भी आनन्द ले लेते। खुद नहीं तैरते तो क्या, रोज कितनी को कोटा-परमिट देकर, तैराते और वैतरणी से तारते रहते हैं!

उस भीड़ में एक टेबुल पर दो सरदार बैठे थे। उनके सामने दो ऐंग्लो-इण्डियन-सी दीखनेवाली छोकरियाँ बैठी थीं, स्कर्ट पहने। सूरत-शक्ल से वे स्टेनो लगती थीं। हो सकता है इन्हीं सरदारों के आफिस या फैक्ट्री में स्टेनो या टाइपिस्ट हों। इस वक्त शायद सिगरेट पीने का कम्पटीशन हो रहा था। दोनों एक साथ सिगरेट जलातीं, जल्दी-जल्दी कश खींचकर, मुँह और नाक से धुँआ निकालतीं। फिर एक सिगरेट खत्म होती, तुरन्त दूसरी जलातीं और प्रतियोगिता शुरू हो जाती।

रमेश को सिनहा साहब याद आये। उन्होंने पेरिस के नाइट-क्लब का एक रोचक संस्मरण सुनाया था। दो सुन्दरियाँ स्टेज पर आती हैं। दोनों स्वर-लहरियों पर थिरकती हैं, नाचती हैं, उछलती-कूदती हैं। फिर एक शराब की बोतल उठाकर अपने पर उलट लेती है। दूसरी शराब की बोतल मुँह से लगाकर, गट-गट पी जाती है। पहली अपना कोट उठाकर फेंक देती है। दूसरी अपना स्कर्ट उतार देती हैं। पहली अपनी बॉड़ी भी खोलकर फेंक देती है। दूसरी भी सारे वस्त्र उतारकर फेंक देती है....यहाँ तक कि अण्डरवियर भी उतारकर एकदम नग्न हो जाती है। अब दोनों किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो एक दूसरे का मुँह देखती हैं। दोनों नग्न युवतियाँ इस मुद्रा में निश्चल स्टेज पर खड़ी हो जाती हैं, जैसे अब बाकी क्या रहा शरीर पर, जिसे उतार फेकें?....तभी पर्दा गिर जाता है।....

लगता है भारत की अति-आधुनिकाएँ भी समय से 'रेस' कर रही हैं। कहाँ, किस बिन्दु या स्तर पर जाकर यह भाग-दौड़ खत्म होगी''''इसका उत्तर तो भविष्य के गर्भ में ही छिपा है। मगर रमेश को लगा, पढ़ी-लिखी फैशनेबुल मॉडर्न लड़कियाँ जीवन की सिगरेट को दोनों छोर से जलाकर, मुँह से पकड़, एक साँस में पी लेना चाहती हैं''''भले ही प्रयत्न में वे अपना अस्तित्व ही समाप्त कर डालें। उन्हें नये-प्रयोग करने में ही मानसिक-सुख या काल्पनिक तृप्ति का बोध होता है।

छवि ने रमेश के बहकते ख्यालों के उड़ते पंख नोच लिये।

किस आर्ट की दुनिया में रंगे गये, जनाब!" छवि मुस्करायी—"कहीं बालकनी से ही स्वीमिंग-पूल में छलांग लगाने का विचार तो नहीं है।"

शेखर ठठाकर हँस पड़ा। रमेश की बाँह पकड़कर अन्दर की ओर मुड़ता हुआ बोला, "चलो यार, मुझे तो भूख लग आयी!"

अन्दर कॉफी-बार' में बैठकर, रमेश को बड़ा अजीब लगा। पीतल के बड़े कलश ही उलटकर, लैम्प शेड बनाये गये थे। एक नये ढंग का 'डेकोरेशन' था। लगता था किसी कलाकार ने पूरा 'डेकोरेशन' किया हो। छवि ने बताया यह एक ऐसा कोना है, जहाँ चौबीसों घण्टे आप को कॉफी मिल सकती है। सारी रात खुला रहता है। लोग नाइट-शो के बाद एक बजे यहाँ''''रमेश के आगे छवि ने मैन्यू रखा।

मुझे भूख नहीं हैं, सिर्फ एक 'कोल्ड कॉफी' चलेगी।"

"यू आर अवर गेस्ट ऑफ आनर।" छवि बोली, "कुछ और बोलिए। आप तो हमें भूखा ही मार देंगे।"

शेखर ने मैन्यू लेकर आर्डर दिया। फिर बोला, "रमेश बड़ा संकोची है। हमेशा 'फारमेल्टी' और तकल्लुफ करता है। इसके साथ किसी दावत में जाओ तो भूखे पेट ही लौटना पड़े।"

"तभी हॉस्टल में फीस्ट के दिन तुम मेरा खाना घर में मना करवा देते थे।" रमेश अतीत की स्मृति से हर्षित होता बोला, "दो आना रूम-ब्वाय को टिप दिया और एक खाने में दोनों का पेट भर जाता। खीर-पूरी, पापड़-गुलाब

जामुन, दही वड़े, सब एक-एक कर दुबारा मँगाये जाते और दूसरी प्लेट में मेरा खाना लग जाता ! क्या दिन थे वे !....''

''और फीस्ट वाले दिन स्पेशल खाना मिलता था। इसलिए शाम को उपवास करना पड़ता। मेस में चूल्हा नहीं जलता था। '' शेखर बोला, ''मैं रमेश को भरपेट खिलाने के वाद, शाम के लिए भी ऐडवांस बुकिंग कर लेता था। छोकरे को एक बीड़ी दे दी और शाम का राशन भी मुफ्त जमा हो जाता।''

छवि चौंकती हुई बोली, ''एं, तुम बीड़ी पीते थे ?''

उसके प्रश्न से शेखर इतने जोर से हँसा कि सबकी आँखें उसे घूरने लगीं। रमेश समझ गया, इस वक्त शेखर अपनी खुमारी में है। उसने स्पष्ट किया, ''हॉस्टल में लड़के दो-चार आने की बीड़ियाँ मँगाकर अपने कमरे ये जरूर रखते थे। किसी को दो बीड़ी दे दी, उससे आधा घंटा चम्पी करवा ली। किसी छोकरे को एक बीड़ी पिलाकर एक कप चाय अपने नाम लिखवाकर उससे एक बड़े गिलास में चाय मँगा ली।''

शेखर मूड में आ गया था। इसकी आँखें सुर्ख हो रही थीं। हँसते-हँसते बोला, ''अपने वार्डन, शुक्ला पंडित याद हैं न ! हनुमानचालीसा पढ़ते, 'भूत' कहकर पत्ता झाड़ कैसे भागे थे ?....''

रमेश ने हँसी रोकते हुए कहा, ''वह तो पूरा क्लासिक था। इनके हॉस्टल में एक वार्डन थे, शुक्ला। बड़े कठोर और नियम के पाबन्द। लड़कों का नाइट-शो पिक्चर देखना बन्द करवा दिया था।....रोज सुबह चार बजे उठ जाते तथा साढ़े चार तक संगम के लिए प्रस्थान कर देते। रोज गंगा-स्नान उनका नियम था....।''

''एक दिन शेखर ने प्लान बनाया। रात में एक ऊँटवाले को दस रुपये देकर उससे दो बजे रात को ऊँट लिया। हॉस्टल के पश्चिमी कोने पर, ऊपर मरम्मत का काम लगा था। मजदूरों ने तख्तों की सीधी ढालुआँ सीढ़ी वना रखी थी। उस पर से ऊँट ऊपर चढ़ाया गया। तीन-चार लम्बी-चौड़ी छतें पारकर उसे ठीक शुक्लाजी के कमरे के बाहर लाकर बिठा दिया गया तथा उसकी नकेल की रस्सी बरामदे के खम्भे से बाँध दी गयी....।''

"सब लड़के चुपचाप नीचे उतर गये। सबेरे भोर में रोज की तरह शुक्लाजी गंगा-स्नान को अँधेरे में किवाड़ खोलकर बाहर निकले। दरवाजे पर ऊँट काल की तरह खड़ा था। उनकी घिग्घी बँध गयी, प्राण नाखूनों में समा गये। वे समझ नहीं पाये, दो मंजिल की चक्करदार सँकरी सीढ़ियाँ चढ़कर यह ऊपर अपने आप कैसे पहुँच गया।....दूसरे ही क्षण वे लोटा-झारी फेंककर, बेतहाशा सीढ़ियाँ कूदते-काँदते नीचे दौड़े....मुँह से सिर्फ एक ही चीख निकल रही थी....बचाओ, दौड़ो....भूत....भूत !"....

छवि भी खिलखिला उठी। रमेश भी हँसी नहीं रोक पा रहा था, शेखर पर तो पूरा जनून सवार था...."सच....यू विल किल मी !" हँसी के मारे उसका पेट ही फटा जा रहा था, वह भूल गया कि वह सभ्य लोगों के बीच होटल ओबेराय के कॉफी-रूम में बैठा है।

● ● ●

२

शेखर के पिता उन दिनों मिर्जापुर में डिप्टी-कलेक्टर थे।

देश में उन दिनों इलाहाबाद विश्वविद्यालय की बड़ी ख्याति थी। अखिल भारतीय प्रशासन सेवाओं में यहाँ के अधिकांश छात्र प्रतिवर्ष अपनी योग्यता के बल पर चुने जाते थे। इसी आकर्षण से शेखर को भी उसके पिता ने स्नातकोत्तर अध्ययन और कानून की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इस विश्वविद्यालय में भर्ती कराया था। हॉस्टल में रहने से शेखर को घर की अपेक्षा स्वतंत्रता अधिक थी।

रमेश का उससे सहपाठी के रूप में ही वहाँ प्रथम परिचय हुआ। धीरे-धीरे परिचय घनिष्ठता में परिवर्तित होता गया।

रमेश इलाहाबाद के प्रख्यात बैरिस्टर का पुत्र था। वह बराबर हर परीक्षा में फर्स्ट डिवीजन में प्रथम स्थान प्राप्त करता। शेखर को उससे नोट्स मिल जाते थे, इसलिए वह सदा उसकी खुशामद में लगा रहता। मगर दोनों के आचार-विचार में बड़ा अन्तर था। फिर भी शेखर में कुछ ऐसा था, जिसने रमेश को उससे बाँध रखा था।

शेखर बराबर कहता था, "अगर तुम आई० ए० एस० में बैठे, तो जरूर टाप करोगे।"

रमेश को नौकरी से चिढ़ थी। वह हँसकर कहता, "तुम ऐश और आराम चाहते हो। तुम जरूर सरकारी अफसर बनो। मगर मैं सरकारी नौकर होकर सरकारी मशीन का एक पुर्जा नहीं बनना चाहता, मैं तो अपना स्वतंत्र विकास करना चाहता हूँ!"

"बैरिस्टर का बेटा, वकील न बनेगा तो क्या मजिस्ट्रेट बनेगा?" शेखर हँसकर बात काट देता।

शेखर दो बार आई० ए० एस० परीक्षा में बैठा। एक बार असफल हुआ। दूसरे वर्ष आई० पी० एस० में सफलता मिली। मगर उसे पुलिस की नौकरी पसन्द न थी। उसने इधर-उधर हाथ-पाँव मारे। एक दवा की बड़ी कम्पनी में उसे बम्बई में नौकरी मिल गयी। वह तीन वर्ष बम्बई में रहा। फिर एक इंजीनियरिंग कम्पनी में काम मिल गया। दो वर्ष मद्रास में रहा। इसी बीच एक बड़ी फर्म में जो एयर-कण्डीशनर आदि में भारत की प्रमुख कम्पनी मानी जाती है, उसे 'सेल्स आर्गनाइजर' का सम्मानित पद मिल गया। पिछले दो वर्षों से वह दिल्ली में जमा हुआ है। वेतन, कमीशन आदि लेकर उसे चौदह-पन्द्रह सौ माहवार मिल जाते हैं।

उसके पिता भी उन्नति करते-करते विदेश मन्त्रालय में उप-सचिव हो गये। उन्होंने डिफेन्स कालोनी में, सरकार से कर्ज लेकर एक छोटा-सा मकान बना लिया। एक वर्ष पूर्व उनकी लन्दन में भारतीय हाई कमिश्नर आफिस में पोस्टिंग

हो गयी। शेखर के भाई-बहन दोनों पढ़ रहे थे, इसीलिए माँ इच्छा रहते हुए भी पति के साथ लन्दन न जा सकी।

शेखर से जब माँ शादी का नाम लेती, वह अपने कान पकड़ता। कहता, "तोबा, मैं जानते हुए अपने गले में फाँसी का फन्दा नहीं लगा सकता। माँ, तुम क्यों मुझे उम्रकैद देना चाहती हो। मैं अभी सिर्फ तीस साल का बूढ़ा हूँ। भारत में पचास-साठ के दो चार बूढ़े हर साल शादी रचाते हैं। इस हिसाब से अभी मैं बूढ़ा-बच्चा हूँ। ....फिर डैडी लंदन में हैं ही। वहाँ अभी पिछले हफ्ते ही एक अस्सी साल के बूढ़े ने सत्तर वर्षीय, औरत से शादी करी। अगर कभी भारत के हिसाब से 'ओवर-एज' हो गया तो शादी करने के लिए, कुछ दिन के लिए भारत से बाहर चला जाऊँगा!"

उसके मजाक से छोटे भाई-बहन ही नहीं, माँ के अधरों पर भी मुस्कान लहर जाती। वे कहतीं, "बड़ा हो गया, मगर तेरा बचपना अभी तक नहीं गया। इतना पढ़-लिखकर भी अभी तू बच्चा है!"

"वह तो बूढ़ा भी हो जाउँगा, तब भी ऐसे ही रहूँगा!" शेखर बताता, "देखो न, शादी में कितनी मुसीबतें हैं। मैं 'टूर' पर बाहर दस दिन की जगह बीस दिन रहूँ, मस्त रहता हूँ। टी० ए०, डी० ए० ही बढ़ता रहता है। घरवाली हो तो जल्दी घर भागने की हमेशा लगी रहे। न घर पर चैन न बाहर चैन। बच्चे हों तो बीमारी होगी, बीमारी के साथ डाक्टर, दवा का खर्च। फिर बैंक बैलेंस कैसे बढ़ेगा?....कहीं बीबी तेज स्वभाव की मिल गयी, तो अपनी भी बोस साहब की तरह जिंदगी हो जाएगी। बेचारे बीबी के डर के मारे, सबेरे आठ बजे ही घर से भागते हैं। रात आठ-नौ तक सारा दफ्तर बन्द हो जाने के बाद भी फाइलों में सर मारते रहते हैं। एक दिन मैंने टोका, तो हँसकर बोले, इन फाइलों में सर खपाना, बीबी के ताने-उलाहने सुनने से ज्यादा सुखकर लगता है।...."

उसकी माँ कई बार समझाती, बहू आ जाए तो मेरा भी काम कुछ हल्का हो। जिन्दगी-भर चूल्हा-चक्की ही करती रहूँगी या कुछ आराम भी भाग्य में बदा है?"

इस पर शरारत से हँसकर शेखर कहता, "तुम्हें बहू से ज्यादा एक नौकरानी की जरूरत है। तुम क्यों नहीं एक सुन्दर 'होम-गवर्नेस' रख लेतीं? कल ही मैं 'पेपर' में विज्ञापन दे देता हूँ।"

"लेकिन, मन बहलाने के लिए पोते-पोतियाँ वह कहाँ से आयेंगे?" माँ दूसरा तर्क रखती।

"माँ, भारत की जन-संख्या वैसे ही तेजी से बढ़ रही है। जितने आदमी हैं, उन्हीं के लिए खाना उपलब्ध नहीं है। मैं राष्ट्रपति होता तो फौरन एक आदेश जारी करता, दस-साल तक कोई बच्चा न पैदा करे। जिसके घर बच्चा पैदा हो, उसे फाँसी की सजा होगी। तुम्हें बच्चों का शौक हो, तो कहो कल ही अनाथालय से दो-चार उठा लाऊँ!"

माँ हार मान जाती, "तेरे से बातों में जीत कैसे सकती हूँ? अभी वकालत पढ़ी है, कहीं पेशा भी वही होता तो भगवान ही खैर करता।"

रमेश को उसके एक मित्र ने 'गेलार्ड' में डिनर पर बुलाया था।

'सुप्रीम कोर्ट में एक अपील के सिलसिले में वह दिल्ली आया हुआ था। उसका 'केस' बैरिस्टर सेन कर रहे थे, उन्हीं के जूनियर ने उसे निमंत्रित किया था। रमेश अपने ज्यादातर फौजदारी के मुकदमे बैरिस्टर सेन से ही कराता। इसीलिए जूनियर मेनन से भी दोस्ती हो गयी थी।

रमेश ठीक समय पर 'गेलार्ड' में पहुँच गया था। मेनन पहले से वहाँ बैठा उसका इंतजार कर रहा था।

घड़ी देखते हुए रमेश हँसता हुआ बोला, "मैं तो पाँच मिनट समय से पहले ही आ गया था। सोच रहा था, उसका बाहर ही कुछ देर इन्तजार करूँ?

मेनन की बतीसी चमकी, "यहाँ मैं आधा घण्टा पहले ही आ गया था। तुम देखो, एक भी टेबुल खाली नहीं मिलेगी। एक टेबुल रिजर्व करने के लिए, समय से पहले आना जरूरी हो जाता है!

बैण्ड पूरे वेग से बज रहा था। रमेश को बैण्ड का शोरगुल बुरा लगता। बोला, "इतना शोर होता है कि कोई दो मिनट शांति से बात भी नहीं कर सकता।"

"कसूर हमारा है।" मेनन बोला, "अंग्रेज चले गये, मगर हमारे जैसे आधे- अंग्रेज और आधे हिन्दुस्तानी को छोड़ गये। अंग्रेज लोग खाने की टेबुल पर हमारी तरह गप्पें नहीं मारते। हिन्दुस्तानी तो एक मिनट चुप नहीं बैठ सकते। अगर सबलोग चुपचाप 'डिनर' लें तो आप भी बैण्ड को 'इन्ज्वाय' करें। मगर यहाँ आनेवाले, 'डिनर' के लिए कम, 'बिजनेस' के लिए ज्यादा आते हैं। कहीं कोटा-परमिट की बातें हैं, कहीं लाइसेन्स का चक्कर है····कहीं 'कोर्टशिप' चल रही है !····

"लेडीज़ ऐण्ड जेन्टलमैन !" बैण्ड रुका। माइक पर एक आवाज गूँजी, "आज मिस रीता का जन्म-दिन है। उसकी सहेलियाँ ऊपर बर्थ-डे केक काटने को तैयार खड़ी हैं। आइए, हम सब उसे 'विश' करें !····हैपी····बर्थ-डे टू यू, हैपी बर्थ-डे टू रीता····!"

सबने दोहराया तथा तालियाँ पीटीं !

ऊपर ग्यारह-बारह साल की लगभग बीस-पचीस लड़कियाँ जमा थीं। उन्होंने बड़ा शोर मचा रखा था। फिर एक लड़की आयी, फरमाइश कर गयी। बैण्ड पर उसकी फरमाइश के अंग्रेजी गाने की धुन बजने लगी। तीन-चार किशोरियाँ फूले हुए घेरदार फ्रॉक पहने बालकनी पर खड़ी हो गयी थीं। वे इंगलिश गानों की धुन पर हाथ-पाँव, आँखें और भौंहें नचाकर वे बैण्डवालों को दाद दे रही थीं।

रमेश को यह सब अच्छा न लगा।

"अभी से ये रंग-ढंग हैं, तो फिर आगे चलकर यह क्या करेंगी ?" उसने जिज्ञासा की।

"यहाँ डिनर देनेवाली लड़कियाँ साधारण वर्ग की नहीं होतीं। वे 'कान्वेंट' में शिक्षा पाती हैं, मोटरों पर घूमती हैं। हर साल 'हिल-स्टेशन' जाती हैं तथा घर में एम एन-रोल, ट्रिविस्ट और 'कम सेण्टेम्बर' की ट्यून पर डांस सीखती हैं। उन्हें प्रोत्साहित करते हैं, मॉडर्न-डैडी व मम्मी !····" मेनन ने समझाया।

रमेश को मिस छवि याद आयी। वह भी शायद किसी दिन इसी वर्ग की किशोरियों की तरह रही होगी, न जाने इनमें से कितनी छवि बनेंगी? भारत उन्नति के पथ पर अग्रसर है। भारत की प्रगति का प्रमाण हमारे पनपते हुए कल-कारखाने, बाँध और बिजलीघर नहीं, दिल्ली की ये अति-आधुनिकाएँ हैं! लगता है, देश ने एक लम्बी छलाँग लगा दी हो और हम बीसवीं सदी में ही इक्कीसवीं सदी के दृश्य देख रहे हों।

इस वक्त बैण्ड पर एक काली-सी लड़की ताल देती गा रही थी। उसकी मुख-मुद्रा देखते ही बनती थी। अंग्रेजी गीत की जो पंक्ति वह गा रही थी, उसका अर्थ शायद यहाँ बैठे अधिकांश व्यक्ति नहीं समझ पाते होंगे। मगर फिर भी वे ताल दे रहे थे।

मेनन् ने 'सूप' में नमक छिड़कते हुए बताया, "आजकल इन लड़कियों पर भी मुसीबत आ गयी है। 'पार्क' में पिछले महीने एक हंगामा हो गया। वहाँ एक सुन्दर लड़की इसी तरह बैण्ड पर गाती थी। एक दिन एक पत्रकार महोदय बहुत ज्यादा 'पीकर' बहकते हुए घुस आये। बेयरा को आर्डर किया—"छोकरी को इधर ले आओ!" जब बेयरा ने इन्कार किया, तो उसे वजनी गालियाँ देते उठे और सीधे जाकर लड़की की बाँह पकड़कर खींचने लगे। तुरंत होटल में खलबली मच गयी। काउण्टर पर से एक नौजवान छोकरा भागता आया और उनकी टाई पकड़कर खींचते, घसीटते अन्दर ले गया। वहाँ उसने 'बेयरों' के साथ मिलकर उनकी भरपूर पिटाई की। फिर उन्हें उठवाकर बगल की गली में फेंकवा दिया। मार से नशा हिरन हो गया। दस-पन्द्रह मिनट बाद पत्रकार महोदय पुलिस फोर्स के साथ होटल में आ घुसे। इसी बीच उक्त छोकरा पिछले दरवाजे से रफूचक्कर हो गया।

रमेश ने पूछा, "पुलिस ने नहीं पूछा, मार क्यों पड़ी? उनके मुँह से शराब की दुर्गन्ध तो निकल रही होगी, फिर पुलिस क्यों भागी आयी?"

मेनन ने 'स्लाइस' में मक्खन लगाकर रमेश की प्लेट में रखा। दूसरी 'स्लाइस' उठाकर मक्खन लगाता बोला, "पत्रकारों का दिल्ली में बहुत रंग है। उनसे पुलिस क्या, सभी लोग डरते हैं। रोज ही तो मन्त्रियों के भाषणों का

विज्ञापन छापकर उन्हें उपकृत करते रहते हैं। मंत्री को अगर 'पब्लिसिटी' देते हैं तो उनसे सिफारिश तो करवा ही सकते हैं। इसीलिए सब डरते हैं।"

रमेश को हँसी आ गयी, "मन्त्री के पापों पर परदा पत्रकार डालते हैं। इसीलिए उनके सर पर मंत्री का हाथ होता हैं। अगर मंत्री सर पर हो तो फिर आत्म-नियंत्रण कब तक रह सकता है? इसीलिए स्वच्छंद विचरण की स्वतंत्रता प्राप्त हैं। फिर कौन पत्र ऐसा है जो ईमानदारी से किसी पत्रकार के काले-कार-नामों का समाचार छापेगा? इसीलिए रात के अँधेरे में पत्रकारों को खुलकर खेलने की पूरी छूट हैं।"

बगल के सोफे पर दो चीनी नवयुवक बैठे थे। उनके बीच एक भारतीय नवयुवती बैठी थी। एक घण्टे से वे 'टूटी-फ्रूटी' खा रहे थे टूटी-फूटी अंग्रेजी में वार्तालाप कर रहे थे।

इसी समय चार पाँच 'बीटनिक' अमेरिकन 'टूरिस्टों' के साथ एक सुन्दरी ने प्रवेश किया। अगर सलवार-कुर्त्ता न होता तो शायद रमेश, उस भारतीय सुन्दरी को भी विदेशी समझता। लगा, होटल ओबेराय के बुक-स्टाल में जिस अप्सरा को देखा था, उसी की सगी छोटी बहन यह खड़ी है। वैसे ही गोरा-चिट्टा रङ्ग, सर पर नकली बालों का छोटा पिरामिड, बड़ी-बड़ी कजरारी आँखें, लाल गहरी लिपस्टिक से जड़े पतले होंठ, सुग्गे-सी लम्बी नोकीली नाक और साँचे में ढला, कसा सुकुमार शरीर!

"गाइड हैं!" मेनन ने 'कटलेट' काटते बताया, "बड़ी कमायी है। टूरिस्टों का खूब मनोरंजन करती है। दिल्ली यूनिवर्सिटी से दो साल पहले अंग्रेजी में एम० ए० किया है। इसकी बड़ी बहन 'ऐयर होस्टेज' है। चांस लगा था, मगर इसने 'इण्टरव्यू' के बाद, 'ऑफर' अस्वीकार कर दिया। वह (गाइड) के रूप में ज्यादा सुखी व संतुष्ट है।"

रमेश ने व्यंग्य कसा, "लगता है तुम सी० आई० डी० डिपार्टमेंट में कुछ दिन रह चुके हो।"

"क्रिमिनल लायर को यह सब जानना ही चाहिए।" कहकर मेमन मुस्कराया।

इस वक्त कोई टेबुल खाली नहीं थी । एक अमेरिकन, जो पूरा 'कार्टून' लग रहा था, आँखों पर मोटा काले फ्रेम का चश्मा लगाये, उस महिला गाइड से सटा खड़ा था, उसके कन्धे पर हाथ रखकर, कान में कुछ फुसफुसाकर कहा । हँसी के फव्वारे छूटे, हाथ मिले । सुन्दरी की आँखों के लाल डोरे बता रहे थे, उसने अभी कुछ देर पहले विलायती 'अँगूर का रस' चखा है ।

इसी बीच शेखर ने एक किशोरी-सी दीखनेवाली सुन्दरी के साथ प्रवेश किया । उस को देखते ही 'गाइड' महिला आगे बढ़ती हुई बोली, "हैंलो शेखर, हाऊ आर यू ?"

"फाइन !" शेखर ने हाथ मिलाया ।

यह मुलाकात टूरिस्टों को अच्छी न लगी ।

"कल स्पोर्ट्स क्लब आ रहे हो न ?"

"अगर तुम आओ तो 'प्रामिस' कर सकता हूँ ।" शेखर सिगरेट का धुआँ छोड़ता बोला, "कल 'थर्स-डे' है, 'बाल-रूम' डांस होगा । मैं सात बजे पहुँच जाऊँगा !"

"श्योर !" एक बार पुनः हाथ मिले और निश्चय को दुहराने की साक्षी में एक दूसरे से कुछ देर तक जकड़े रहे ।

रमेश की टेबुल के पास ही यह पूरा नाटक चल रहा था । मगर सबकी पीठ इधर थी । इसी बीच कुछ सीटें खाली हुईं ।

दोनों चीनी युवक बिल चुकाकर नवयुवती के साथ जा चुके थे । शेखर बगल के सोफे पर, उस किशोरी के साथ बैठ गया, जो इस वक्त बेहद नाराज थी । शेखर उसको मनाने में लगा था । उसने अभी तक बगल के सोफे पर बैठे रमेश को नहीं देखा था । उसकी पीठ इस वक्त भी रमेश की तरफ थी । रमेश का पूरा वार्तालाप स्पष्ट सुनायी पड़ रहा था ।

डार्लिंग, तुम नाराज हो गयी । वह कोई और नहीं, मेरी पड़ोसिन है । मेरे मकान के पास ही डिफेन्स कालोनी में इसकी भी शानदार कोठी है । आज पूरे छह महीने बाद इसकी शक्ल देखने को मिली है ।''''नसीम, यकीन करो, तुम्हें मेरी पाक मोहब्बत की कसम''''। मैंने तुमसे कुछ भी नहीं छिपाया ।"

बेयरा यमदूत की तरह सर पर सवार था। शेखर ने पूछा, "अच्छा बताओ, नसीम, क्या चलेगा। ठंढा या गरम ?"

बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये तुरन्त आर्डर भी दे दिया, "दो गिलास कॉफी और दो कप पानी लाओ !"

बेयरा डीठ की तरह खड़ा था।

"क्या मुसीबत है ?" शेखर बड़बड़ाया, "जाते क्यों नहीं ? कुछ ऊँचा सुनते हो क्या ?"

"क्या लाऊँ हुजूर !"

"बोला न दो कप पानी, दो गिलास कॉफी ?"

"नसीम के साथ बेयरा का भी हँसने का साहस पड़ा।

"आज ज्यादा पी ली थी क्या ?" नसीम ने टोका।

बेयरा चला गया। नसीम ने शिकायत करी, "तुम इतनी सारी लड़कियों को तंग क्यों करते हो ? अगर किसी दिन सब मिल जाएँ, तो तुम्हारी खोपड़ी गंजी बन जाए। कितना झूठ बोलोगे और किस-किस को धोखा दोगे। पाप का घड़ा कभी तो फूटेगा ही।"

"खुदा कसम।" शेखर राख झाड़ता बोला, "मेरी तो सिर्फ इकलौती तुम्हीं महजबीं हो। बाकी सब तो बकवास हैं।"

मेनन ने रमेश को टोका, "किसी की प्राइवेट बातें नहीं सुननी चाहिए।"

"यहाँ सब कुछ 'पब्लिक' है ! रोमांस भी 'सीक्रेट एफेयर' नहीं।" रमेश ठण्ढी साँस लेता बोला, "जनतन्त्र के युग में, जनता का राज होता है। इसीलिए जनता से कोई पर्दा नहीं किया जाता। जो खुली आँखों में जितनी ज्यादा धूल झोंक सकता है, वह उतना ही बड़ा नेता बन जाता है।"

"हियर····हियर !" रमेश की आवाज सुनकर शेखर को पहचानते देर न लगी। बोला, "अहा, आप भी यहाँ जमे हैं ?" चार आदमी की सीट छेंककर बैठे हो, मगर मैं इतनी देर खड़ा रहा, तुमने मुझे बैठने की जगह भी नहीं 'ऑफर' की।'

"बात यह है कि मेरे पास सिर्फ दो सीटें थीं और तुम अकेले भी न थे।" रमेश ने व्यंग्य किया, "तीन कुर्सियाँ होतीं, तो जरूर मैं तुम्हें 'ऑफ़र' करता।"

शेखर ने नहले पर दहला जमाया—"शेखर को एक वक्त में सिर्फ दो सीट की ही जरूरत होती है।"

रमेश ने व्यंग्य किया, "लगता है, तुम्हारे दरवाजे पर रोज लम्बी 'क्यू' लगती होगी ?"

"यार, अपनी तो 'टू-सिटर' रोल्स-राइस गाड़ी है। एक समय में, एक से ज्यादा मुसाफिर को लिफ्ट दे भी कैसे सकते हैं ?" शेखर ने गोल जवाब दिया।

फिर नसीम से परिचय कराता बोला—"आप मेरी सबसे 'स्वीट-फ्रेण्ड' नसीम बानू ! इर्विन हॉस्पिटल में हैं।....आप मेरे दोस्त, दोस्त शब्द जरा फिट नहीं बैठता, कुछ हल्का लगता है....मेरे भाई से भी ज्यादा प्यारे हैं रमेश भैया, इलाहाबाद के 'बडिंग' एडवोकेट हैं....! आजकल हवा-पानी बदलने दिल्ली आये हुए हैं।"

रमेश ने मेनन का परिचय दिया—"माई गुड-फ्रेण्ड', ब्रदर लायर मेनन ! सुप्रीम-कोर्ट में हैं।"

परस्पर अभिवादन के बाद रमेश ने पुनः मजाक किया, "वैसे वकील और डाक्टर का परिचय ठीक नहीं होता। वकील को तो 'डे शिफ्ट' में ही काम करना पड़ता हैं, मगर डाक्टर को 'नाइट-शिफ्ट' भी कभी-कभी 'ऐंड' करनी पड़ जाती हैं !"

नसीम व्यंग्य से तिलमिला उठी। तुरन्त जवाब दिया, "पहले परिचय में इतनी आजादी ठीक नहीं कही जा सकती, मगर जब आपने बिस्मिल्लाह कर ही दिया, तो मैं भी कुछ 'अर्ज' करूँ, अगर इजाजत हो !"

"जरूर, इसमें हर्ज क्या है ?"

"डाक्टर तो 'रोगी' की सेवा करता है, किसी का जी बहलाता है या ग़म गलत करता है, मगर वकील ? माफ कीजिए, दिन के उजाले में जो काम वकील करता है, उसे रात के अँधेरे में भी डाक्टर करने में हिचकेगा ? 'टेम्पुल

ऑफ जस्टिस' में झूठ का व्यापार या तिज़ारत करनेवाला दूसरा कोई नहीं होता, वकील ही होता है।"

शेखर उसकी हाजिरजवाबी से झूम उठा—टेबुल पर हाथ पटकता हुआ बोला, "डियर, डियर। वण्डरफुल।"

हँसी और ठहाकों में बात उड़ गयी।

शेखर ने रमेश को टोका, "आपको जब रिंग करो, तो पता चलता है 'कोर्ट' गये हैं। क्या घर नहीं चलोगे! माँ शिकायत कर रही थी, तुम उनसे बिना मिले ही लौट जाते हो।"

रमेश झेंपता हुआ बोला, "कल किसी वक्त जरूर आऊँगा।"

"यह सब झोल-झाल है। कल आप मेरे साथ लञ्च कर रहे हैं, घर पर।" फैसला सुनाते हुए शेखर बोला, "गेलार्ड-सा खाना नहीं मिलेगा, मगर फिर भी तुम्हें अच्छा अवश्य लगेगा।"

"अच्छा, अगर 'केस' से छुट्टी मिल गयी तो जरूर आ जाऊँगा।"

"तुम्हें कौन-सी सुप्रीमकोर्ट में बहस करनी है? मिस्टर मेनन तुम्हारी 'हेल्प' को बैठे ही हैं।"

बिल चुकाकर मेनन चलने की प्रतीक्षा कर रहा था। रमेश भी विदा लेता उठ खड़ा हुआ।

बाहर निकलते हुए रमेश बोला, "बिना पान के 'डिनर' पूरा नहीं होता।"

"ओ, श्योर!"

मेनन उसे लेकर रीगल के पास गया। पान की गिलौरियाँ मुँह में रखीं।

एक साहब अपनी संगिनी के जूड़े में हार बाँध रहे थे। रमेश को हँसी आ गयी। बोला, "दिल्ली में जितना सार्वजनिक प्रेम-प्रदर्शन का नाटक देखने को मिलता है, शायद उतना कहीं और देखने को नहीं मिलेगा।"

"यह क्यों भूलते हो, दिस इज़ 'कैपिटल'! यह अपराधों की भी नगरी है, 'कैपिटल ऑफ आल सिन्स'!' मेनन ने कार स्टार्ट की।

●●●

३

सुप्रीम-कोर्ट में उस दिन लंच से पूर्व ही केस की सुनवायी समाप्त हो गयी। रमेश टैक्सी कर सीधे डिफेन्स कॉलोनी पहुँचा।

उसे लगा, वह भारत से बाहर, इंगलैंड या अमेरिका की किसी बस्ती में आ पहुँचा है। एक-से-एक आलीशान-भव्य कोठियाँ। चारों ओर श्री एवं सम्पन्नता। कहीं भी कोई झोपड़ी नहीं। लगता है, भारत का सारा वैभव इस नयी कॉलोनी में आकर बस गया है। हर बंगले के बाहर प्रायः मोटरें खड़ी देखीं। मोटर है तो अन्दर 'फ्रीज', रेडियो और टेलीविजन भी जरूर होगा। भारत की प्रगति की कितनी उजली तस्वीर है। देश ने सचमुच कितनी लम्बी छलांग लगायी है। पहले तो इधर सब ओर जंगल-ही-जंगल, सूना बियाबान पड़ा था। आज़ादी के बाद दिल्ली का नक्शा ही बदल गया। पाँच लाख से आबादी चालीस लाख हो गयी।

शेखर का मकान आया।

माँ से कई वर्ष बाद मुलाकात हो रही थी। उनके बाल कुछ सफेद हो चले थे। रमेश ने चरण छुए। आशीर्वाद की गंगा आँखों से बह निकली। माँ सचमुच कितनी वात्सल्यमयी होती है! दया, करुणा, स्नेह और त्याग की साकार प्रतिमा।

"कहो बेटा, अच्छे तो हो!" माँ ने पूछा—"कभी तुम्हारा माँ से मिलने को मन नहीं करता! सुना है, बहुत बड़े वकील बन गये हो।"

"सब आपका आशीर्वाद है!" कुछ झेंपते हुए रमेश बोला, "मैं समझता था आप भी चाचाजी के साथ विलायत चली गयी हैं!....वह तो शेखर से इस बार पता चला कि आप यहां हैं।"

"शेखर ने टोका, 'बन्दापरवर' दो साल बाद तो आप मुझसे मिल रहे हैं।"

"'तुम ज्यादातर तो 'टूर' पर बाहर रहते हो। फिर साल में मुश्किल से दो-एक पत्र लिखने की ही तुम्हें फुर्सत मिल पाती है इसलिए समाचार मिलता भी नहीं!"

शेखर की बहन रागिनी, जो कद में शेखर के कन्धे तक पहुँच रही थी, एक ट्रे में 'फ्रीज' से निकालकर 'एपुल जूस' की बोतल और दो गिलास लायी। टेबुल पर ट्रे रखकर नमस्ते की।

"अरे, तू तो एकदम से बदल गयी। रास्ते में मिलती तो मैं पहचान भी नहीं पाता।····किस क्लास में पढ़ती है ?····" रमेश ने पूछा।

"बी० ए० पार्ट थ्री है।"

"ओ माई गॉड, तुझे किसने इतनी जल्दी बी० ए० में पहुँचा दिया ? मैं तो समझता था, यही आठवीं-नौवीं जमात में होगी !" रमेश ने मज़ाक किया।

"वह शरमा कर भाग गयी।

'एपुल जूस' बहुत स्वादिष्ट एवं ठंढा था। माँ ने बात चलायी, "तू बहू को क्यों नहीं साथ लाया। अगली बार उसे जरूर लाना। और देख, यह बात ठीक नहीं कि तुम होटल में ठहरा करो। यह तेरा घर नहीं है क्या ?"

स्नेह से अभिभूत होता रमेश बोला, "अकेला होता तो सीधे स्टेशन से यहीं आ जाता। मगर साथ में 'मुवक्किल' भी होते हैं, इसीलिए होटल में ठहरना पड़ता है।"

"शेखर को क्यों नहीं समझाता ?" माँ ने दिल की बात कही, "आखिर वह क्या जिन्दगी-भर क्वाँरा ही बैठा रहेगा ? क्या मैं पोते खिलाने को तरसती ही रह जाऊँगी ?····"

शेखर ने गिलास टेबुल पर रखते कहा, "माँ, तुम्हारे पास सिवाय 'शादी' के दूसरा कोई 'टॉपिक' नहीं है क्या ?····अरे, जब ३०–३५ साल की लड़कियाँ क्वाँरी बैठी रहती हैं तो फिर मैं कौन-सा अभी बूढ़ा हुआ जा रहा हूँ, शादी तो कभी भी हो सकती है।····माँ समझती हैं, उम्र ज्यादा हो जाने से मेरी 'मार्केट-वैल्यू' कम हो जाएगी, कोई मुझे लड़की नहीं देगा। माँ, अब पुराना जमाना खत्म हो गया। अब तो आर्थिक युग है। अगर जेब में पैसे हों, लम्बी तनख्वाह और रहने को बंगला हो, तो बुढ़ापे में भी शादी हो जाती है। माता-पिता के कहने से ही नहीं, पढ़ी-लिखी सुन्दर लड़कियाँ स्वयं अपनी इच्छा से ऐसे अधेड़

वर को नौजवान से ज्यादा पसंद करती हैं; क्योंकि नौजवान पति होगा तो रोज खटपट होगी।....''

''तेरे लिए लड़कियाँ बैठी रहेंगी ?'' माँ ने पूछा।

''शायद, कोई तपस्विनी मिल भी जाए !'' शेखर बोला।

रमेश ने व्यंग्य किया, ''अगर खाना तैयार दोनों वक्त टेबुल पर गरमागरम मिल जाता हो, तो फिर घरवाली की जरूरत कम महसूस होती है। माँजी, आप कुछ दिनों के लिए चाचाजी के पास चली जाइए।....चार दिन लाला को अकेले सूने घर में रहना पड़े, कोई बात करनेवाला न हो, तो दिन में ही तारे नजर आने लगेंगे।''

शेखर अन्दर से कहता हुआ बोला, ''घर में मन नहीं लगेगा, तो होटल में रह लूंगा।''

''रागिनी ने आवाज दी, माँ रसोई में चली गयी। कमरे में रमेश और शेखर अकेले रह गये।

रमेश ने ताना दिया, ''तुम्हें सब चीजें जब रेडीमेड मिल जाती हैं, तो घर बसाने की क्या जरूरत ? रेडीमेड कपड़े, सैलून, ड्राई क्लीनर्स, होटल, मिनेमा, क्लब सब सेवा को प्रस्तुत रहते हैं। दिल्ली में सभ्य लड़कियाँ भी आसानी से प्राप्त हो जातीं हैं, इसलिए पत्नी तो 'आउट ऑफ डेट' चीज हो गयी।

''तुम नहीं समझोगे !'' शेखर बोला, ''एक व्यक्ति की नाक कटती है तो वह सारे शहर की नाक कटते देखना चाहता है। तुमने शादी क्या कर ली, मुझे भी बीवी का गुलाम बनाना चाहते हो। मैं खुली जिन्दगी को सीखचों में कैद नहीं करना चाहता। बीवी से रोज खटपट हो, बच्चे और बीमारी का सिलसिला दम घोंटता रहे तथा असमय ही बुढ़ापा आकार धर दबोचे। भला यह भी कोई जिंदगी हैं ? 'फार्मूले' से गणित का प्रश्न जरूर हल किया जा सकता है, मगर जिन्दगी को सुखी और सन्तोषप्रद नहीं बनाया जा सकता। जिस प्रकार आज ग्राम, शहर की सीमाएँ फैलकर, प्रांतीयता व राष्ट्रवाद को लाँघती, अन्तरराष्ट्रीय भ्रातृत्व एवं सद्भाव तक विकसित हो रही हैं, उसी प्रकार संयुक्त परिवार को

व्यक्तिवाद ने तोड़ा और आगे परिवारों के बँधे, नये-पुराने साँचे भी टूटते चले जाएँगे।"

आखिर विकास व प्रगति का यह रथ किस सीमा पर जाकर रुकेगा?" रमेश ने पूछा, "परिवार टूटने का मतलब राष्ट्र ही विखंडित हो जायेगा। जो परिवार से प्रेम नहीं रख एकता वह भला राष्ट्रभाषा का सम्मान कैसे सुरक्षित रख सकता है? परिवार ही तो मौलिक इकाई है। जो व्यक्ति की स्वेच्छाचारिता पर अकुंश रखती है। उसे मर्यादित करती है।"

"विवाह जीवन की अनिवार्य आवश्यकता नहीं।" शेखर बोला।

"इसका मतलब स्त्री को भी अपनी आजीविका के लिए श्रम करना होगा। जहाँ भारत में इस वक्त सरकारी आँकड़ों के अनुसार लगभग दो करोड़ बेकार व्यक्ति हैं, उनकी संख्या चार-पाँच करोड़ हो जायेगी।"

"आँकड़ों की मृग-मरीचिका में भटकने की जरूरत नहीं।" शेखर बोला, "पुरुष ने अपनी सुख-सुविधा के लिए परिवार-प्रथा को जन्म दिया। वह उपार्जक होता, इसलिए वह स्वामी बना, स्त्री आश्रिता होती, इसलिए वह दासी बनी। पुरुष श्रम करता, स्त्री मनोरजंन के साधन जुटाती। जिस व्यवस्था में स्त्री ही मनोरजंन का साधन हो, वहाँ बच्चे जरूरत से ज्यादा होंगे ही। आबादी बढ़ेगी। साधन बढ़ेंगे नहीं, इसलिए बेकारी आयेगी। घर की चहारदीवारी तोड़कर, स्त्री को भी समानता का दर्जा दीजिए, उसे भी खुले वातावरण में जीने की आजादी दीजिए, अपने पाँवों पर खड़े होने का अवसर दीजिए, देश का नक्शा ही बदल जायेगा। परिवार-नियोजन की जरूरत नहीं रहेगी। आबादी का सुरसा के मुख की तरह बढ़ना रुक जायेगा। बेकारी का सम्बन्ध तो आबादी से जुड़ा हुआ है। एक बार आबादी का विस्तार रुक जाये तो फिर बेकारी अपने आप समाप्त हो जायेगी।"

"यह क्यों भूलते हो कि लता को भी वृक्ष के सहारे की जरूरत होती है। नारी को खुली स्वतंत्रता देने का अर्थ, समाज का सर्वनाश ही हो जायेगा। सभी उसका भोग करने को आतुर रहेंगे, कोई उसकी जिम्मेदारी लेने को प्रस्तुत न

होगा । चारों ओर अराजकता एवं अनिश्चितता का वातावरण छा जायेगा । ...." रमेश बोला ।

"यही दृष्टिकोण नकारामत्क है । हम भारतीयों ने नारी को छुई-मुई बनाकर रखा । उसे 'अबला' कहकर सम्बोधित किया । बचपन में पिता की, युवावस्था में पति की तथा वृद्धावस्था में पुत्रों की अश्रिता बनाकर उसका जीवन कंटकित कर दिया । लक्ष्मण-रेखा में कैद नारी का अपहरण करने को हर जगह रावण छद्म वेश में उपस्थित रहता है । नारी को कैद से मुक्त कर दीजिए, उसके विवेक पर पर विश्वास कीजिए, वह स्वयं राम एवं रावण में विभेद कर लेगी ।" शेखर टेबुल पर हाथ पटकता हुआ बोला, "जरा समाज के नीति के स्वयंभू ठेकेदारों को बुलाकर दिल्ली के उन आफिसों को दिखाओ, जहाँ भारत की नयी नारी खुले वातावरण में पुरुष के साथ कन्धे-से-कन्धा मिलाकर श्रम-रत करता है । जहाँ नारी आजीविका के लिए किसी की मुहताज नहीं, स्वयं उपार्जक है । कितने गरीब, छोटे परिवार जो कल तक अंधकार एंव निराशा के वातावरण मे दम तोड़ रहे थे, एक नारी के साहस से जगमगा उठे हैं । निराशा का स्थान खुशहाली ने ले लिया है । लड़की कमाती है, छोटे भाई-बहनों को इज्जत से स्कूल पढ़ने भेजती है । उसकी विधवा माँ को भिखारी की तरह रिश्तेदारों के आगे सहायता के लिए झोली नहीं फैलानी पड़ती ।

शेखर ने सिगरेट सुलगा ली । कश खींचता हुआ बोला, "तुम समझते हो दफ्तरों में काम करनेवाली लड़कियाँ मोम की बनी होती हैं ? क्या मजाल कोई बुरी नजर से देख भी जाए । आत्म-सम्मान एवं साहस की साकार प्रतिमा ! उनमें हीनता की भावना जरा भी देखने को न मिलेगी ।"

रमेश ने टोका, "यह तो चित्र का एक पहलू है । मगर क्या यह सच नहीं है, कि 'प्रोमोशन' के नाम पर, पुरुष-अधिकारी इन अबलाओं का शोषण करता है ? कोई भी लड़की, अपने 'बास' को नाखुश कर एक दिन भी काम पर बनी नहीं रह सकती है । क्या इसी का नाम आजादी है ? रोज ब्वॉय-फ्रेण्ड बदलते रहे, सबका मनोरंजन करती रहे, मगर कोई हाथ पकड़ने को प्रस्तुत न हो···· यह भी कोई जीवन है ?"

"मेरे दोस्त, यह क्यों भूलते हो भगवान ने स्त्री-पुरुष की रचना करते वक्त यह नहीं कहा था कि पुरुष को सब स्वतंत्रता है, स्त्री को कोई नहीं ? अगर एक लड़के की दो-तीन 'गर्ल-फ्रेण्ड्स' हो सकती हैं, तो फिर लड़की के दो-तीन 'व्वॉय फ्रेण्ड' होने में क्या आपत्ति है ? जो नैतिकता पुरुष के लिए उचित है, वही स्त्री के लिए भला 'अनुचित' कैसे कही जा सकती है ?" शेखर बोला ।

डायनिंग टेबुल पर खाना लग गया था । रमेश 'वाश-बेसिन' से हाथ धोकर, कुर्सी पर बैठ गया । खाना बहुत स्वादिष्ट था । माँ रसोई में खाना बना रही थी, रागिनी लाकर खिला रही थी ।

रमेश ने पूछा, "इतना स्वादिष्ट, गर्मागर्म खाना तुम्हें दिल्ली के किस होटल में मिल सकता है ?"

"जो होटल का खाना पसन्द करते हैं, उन्हें यह खाना कभी अच्छा नहीं लगेगा । घर में जो खाना तैयार है, उसे ही खाकर सन्तोष कर लेना पड़ता है । मगर होटल में चार पेज का 'मैन्यू' होता है । जो चाहो आर्डर करो, हाजिर है ।" शेखर गर्व से बोला ।

रागिनी रसोई में गयी थी । धीरे से रमेश बोला, "इसीलिए एक अदद पत्नी से तुम्हें भला तृप्ति कैसे हो सकती है ? तुम्हें तो रोज 'चेञ्ज' चाहिए ?'

"हियर यू आर ।" शेखर जोर से ठहाका लगाता बोला ।

"आज रात सात बजे स्पोर्ट्स क्लब पहुँच जाना । खाना वहीं खाएँगे । शेखर बोला ।

"बेकार बोर होंगे । वहाँ तुमने किसी और को 'इन्वाइट' कर रखा है ?" रमेश बोला ।

शेखर बोला, "मैं तुम्हें ऐसे ही नहीं बुला रहा हूँ । मैं तुम्हें दिखाना चाहता हूँ, जिन्दगी क्या है ? अपनी खुली आँखों और खुले दिमाग से देखो, जमाना कहाँ तक आगे बढ़ गया है । पुरानी नैतिकता और सामाजिक बंधन टूटते जा रहे हैं ।...."

रमेश को स्वीकृति देनी पड़ी ।

● ● ●

४

सायंकाल सात बजे रमेश स्पोर्ट्स क्लब पहुँच गया। बाहर कारों की लम्बी कतारें लगी थीं। गेट से अन्दर प्रवेश करते ही बायीं ओर चपरासी ने सलाम ठोंका। रजिस्टर आगे बढ़ाता हुआ बोला, "आप मेम्बर हैं न सा' ब ?"

"मैं गेस्ट हूँ; शेखर साहब का।"

दुबारा सलाम करता चपरासी बोला, "वो आपका अंदर इंतजार कर रहे हैं!"

कार से एक अंग्रेज युवती उतरी। साथ में दो-तीन भारतीय थे। वह लचकती-मटकती अन्दर चली गयी। पीछे-पीछे रमेश भी चलने लगा।

लॉन में कुछ कुर्सियाँ बिछी थीं। उपस्थिति बहुत कम थी। वह अंग्रेज युवती भी अपने भारतीय मित्रों के साथ एक कुर्सी पर बैठ गयी।

रमेश पहली बार यहाँ आया था। शेखर को न देखकर वह लौटना चाहता था। उसकी दृष्टि लॉन के दूसरे छोर पर स्थित बरामदे की ओर गयी। वहाँ भी कुछ लोग बैठे सुरापान कर रहे थे। रमेश उधर गया। शेखर वहाँ भी न था। बरामदे से होकर रमेश ने अन्दर 'हॉल' में प्रवेश किया। शेखर यहाँ आया हुआ था।

"वेलकम रमेश!" एक हाथ में गिलास पकड़े शेखर उठ खड़ा हुआ।

रमेश उसकी बगल में सोफे पर धँस गया। 'फ्लोर' पर कोई न था। डान्स पर करीने से एक बैण्ड का सामान सजा हुआ था। हॉल में दो-तीन कुर्सियों पर इक्के-दुक्के लोग बैठे हुए थे। रमेश ने साश्चर्य पूछा, "आज भीड़भाड़ एकदम नहीं है?"

"अभी तो लोग आएँगे। आठ बजते-बजते यहाँ एक भी चेयर खाली नहीं रहेगी। 'थर्स-डे' को बाल-रूम डांस होता है, इसीलिए कुछ ज्यादा ही लोग आते हैं।"

बेयरा खड़ा हो गया।

"दो प्लेट फ्राई-फिश, वैफरस् और साब' के लिए एपुल-जूस !" शेखर ने आर्डर दिया।

"तुम कभी-कभी कुछ 'ड्रिंक्स' ले लिया करो।" शेखर गिलास खाली करता बोला, "बिना इसके जिंदगी में जोश नहीं आता !"

"जोश के साथ अगर 'होश' गायब हो जाए, तो फिर अनर्थ हो सकता है !"

"मेरे दोस्त, तुम क्या जानो कि एक जाम में क्या नशा होता है ? सारी चिन्ताओं से मुक्ति मिल जाती है, तुम ऐसा महसूस करोगे, मैं ही सब कुछ हूँ। स्वर्ग क्या होता है, इसे जानने के लिए ह्विस्की का एक छोटा 'पेग' ही टेस्ट कर देखो !" शेखर कुछ बहकता-सा बोला।

रमेश हँसता हुआ बोला, "अरे यहाँ तो स्वर्ग के लिए वैसे ही बहुत लम्बी 'क्यू' लगी हुई है, पता नहीं वहाँ मेरे लिए 'एकोमोडेशन' हो या न हो ! मुझे तो इसी अभाव और संघर्ष की दुनिया में जिन्दा रहने दो। मुझे तो यहीं स्वर्ग का सुख प्राप्त हो जाता है !"

"तुम्हारा पढ़ना-लिखना सब बेकार है, 'यूसलेस' !" शेखर व्यंग्य से हँसता हुआ बोला, "तुम पूरे 'कूप-मण्डूक' हो। जरा कुँए से बाहर निकलकर भी देखो, दुनिया क्या है ?"

"जिसे तैरना नहीं आता, वह समुद्र में छलांग लगाकर जीवन को खतरे में क्यों डाले !" रमेश ने उत्तर दिया, "बहुत से लोग किनारे खड़े रहकर भी तैरने-वालो को देखकर संतोष प्राप्त कर लेते हैं।"

धीरे-धीरे हॉल में लोग पहुँच रहे थे। सारा वातावरण सुगन्ध से भर उठा। सब नजरें एक ही पर केंद्रित हो गयीं। शेखर की फ्रेंड 'गाइड' ने प्रवेश किया। बाहर नीले रंग की सफेद सीपवाली साड़ी। पल्ले पर चमकता ब्रोच। जूड़े में उजले मोतियोंवाली जड़ाऊ क्लिप। ऊँची हील की सैण्डिल। गले में मोतियों का धवल हार। सारे हॉल का फोकस उसी पर केन्द्रित हो गया। सुगन्ध से लगा जैसे बहार ही नारी शरीर धारण कर साकार चली आयी हो।

शेखर ने उठकर स्वागत किया, "वेलकम रोजी !"

फिर रमेश से परिचय कराया, "माई ओल्ड फ्रेंड, टाप लायर ऑफ इलाहाबाद !"

रोजी ने हाथ जोड़ दिये। बत्तीसी चमकी, धवल दतं-पंक्ति लिपिस्टिक जड़े होंठों में ऐसे चमकी, जैसे सूर्यास्त के समय बिजली लहर जाय। बड़ी-बड़ी रसीली कजरारी आँखें, धनुषाकार भौंहें। लगता, किसी कुशल चित्रकार ने अपने हाथों चित्र में रंग भरा हो। रमेश के शंकालु मन की दीवारों से एक प्रश्न अनायास छू गया—'जहाँ इतना रूप-माधुर्य हो, वहाँ अपवित्रता कैसे हो सकती है ?····

"शेखर ने पुनः आर्डर दिया।

दो गिलासों में सोडे के साथ ह्विस्की मिलायी। एक में एपुल-जूस डाला। तीनों गिलास टकरायें····एक दूसरे को 'विश' किया, फिर अधरों से जुड़ गये। रमेश को सुराहीदार स्फटिक गर्दन के उतरते जहर के घूँट को देखकर बड़ा दुःख हुआ। श्वेत स्फटिक-सी उजली पारदर्शी गर्दन, कैसे विष को धारण कर रही है ?····

वही अंग्रेज युवती डांस पर आकर बीच में बैठ गयी थी। उसके आस-पास भारतीय मित्र बैठकर बैण्ड का सुर मिलाने लगे।

सामने एक टेबुल गोल थी, जिसके चारों ओर कुछ सरदार एवं दूसरे नवयुवक, रंगीन कठपुतलियों के साथ बैठे थे। एक युवती ने मुंह में मोटा सिगार लगाया। जोर से कश खींचा, फिर वह जोर से खाँसने लगी। दूसरी ने वही सिगार मुँह में लगाया और खाँसने लगी। हँसी के कहकहे लगे।

रमेश के पासवाले सोफे पर, एक साँवली-सी बीस-बाईस की लड़की, दो व्यक्तियों के साथ बैठी सुरापान कर रही थी। रमेश ने अनुमान लगाया, एक व्यक्ति पति होगा, दूसरा उसका 'बिगबास' होगा ? या एक व्यापारी होगा, दूसरा कोई सरकारी अधिकारी और युवती उसकी सेक्रेटेरी होगी। उसने देखा दिल्ली में, विवाहित युवतियाँ बहुत कम ही माँग में सिन्दूर लगाती हैं और वह भी नाम मात्र का। शायद वे सिन्दूर से शादी का विज्ञापन कर अपना बाजार-मूल्य गिराना पसन्द नहीं करतीं। सभी अपना वय कम दर्शाना चाहती हैं तथा

तितली बन इधर-उधर स्वच्छंदतापूर्वक विचरण करना चाहती हैं !! माँ-और बेटी सज-सँवर कर एक साथ ऐसे घूमती हैं, जैसे दो समवयस्क सहेलियाँ जा रही हों।

बैण्ड बज उठा। माइक पर अंग्रेज युवती झूमकर गाने लगी। सिगरेट का धुआँ, शराब एवं इत्र की मिली-जुली वास तथा हँसी के गूँज से वातावरण विचित्र-सा हो रहा था। शोरगुल और बैण्ड के स्वरों के बीच, युवती की स्वर-लहरी के शब्द स्पष्ट नहीं सुनायी पड़ रहे थे। एक कठपुतली की तरह, वह 'डायस' पर हिल-डुल रही थी, खुद ही गाती, खुद ही प्रशंसा में झूमती''''उसे मानो इसकी चिन्ता नहीं, कोई उसकी प्रशंसा कर रहा है या नहीं।''''गाना समाप्त हुआ। तालियाँ बज उठीं, जैसे कोई रस्म पूरी की जा रही हो !

शेखर के साथ, रोजी ने भी सिगरेट सुलगायी, दोनों के मुँह से निकले धुएँ के छल्ले एक दूसरे का आलिंगन करने लगे। दोनों की आँखों के डोरे लाल हो उठे।

रमेश को बड़ा अजीव-सा लगा। उसने महसूस किया, जैसे प्रतिमा टूट गयी। जिस मूरत को उसने यत्नपूर्वक एक सिंहासन पर बैठाया था, वह हवा के झोंके से गिरकर भूमि पर बिखर गयी।

शेखर ने पूछा, "कैसा 'बिजनेस' चल रहा है ?"

"फाइन !" रोजी ने एक जोर से कश खींचा।

"आजकल टूरिस्ट भी बड़े रंगीले आ रहे हैं।"

रोजी ने बताया, "इटली, फ्रांस और डेनमार्क के टूरिस्ट ही पहले कुछ ज्यादा रंगीले माने जाते थे, मगर आजकल सबसे ज्यादा फरमाइश अमेरिकन करते हैं !"

उसकी आँखों में झाँकता हुआ शेखर बोला, "तुम्हारी क्या ?"

एक जोरदार ठहाका लगा। झेंपती-सी रोजी बोली, "एक अमेरिकन प्रोफेसर ने तो मेरे सामने सीधे विवाह का ही प्रस्ताव रख दिया था।

रमेश को लगा, वह सचमुच वहुत सभ्य व्यक्ति रहा होगा। तभी रोजी कुछ नशे में वहकती-सी बोली, "एक अमेरिकन करोड़पति बूढ़े ने मुझसे अशोका

होटल के एकांत कमरे में प्रश्न किया, "तुम्हारी कीमत क्या है?"....मैंने टटोलने के लिए पूछा, "तुम कितनी कीमत दे सकते हो?"....वह बेचारा खुशी में पागल हो मेरे हाथ चूमता हुआ बोला, "एक लाख डालर का इस्टेट तुम्हें दे सकता हूँ!" दूसरी सिगरेट मुँह से लगाती वह बोली "बस? मैंने उसके उत्साह पर ठंडा पानी डाल दिया। एक करोड़ डालर।" बूढ़े को पसीना आ गया। वह रूमाल से माथा पोछता हुआ बोला—"इतने में 'एलिजाबेथ-टेलर' को खरीद सकता हूँ।"

"आफकोर्स, ग्रैंड-फादर!" यह कहकर मैं कमरे से बाहर भागी। कटी पतंग की तरह बूढ़ा पलंग पर, अधमरा-सा लुढ़क गया!"....

शेखर ने जोर का ठहाका लगाया। रमेश भी अपने को न रोक सका। रोजी भी हँसी की फुलझड़ियाँ छोड़ने लगी। सब लोग इधर ही देखने लगे। तभी बैण्ड पर नयी धुन बज उठी। जोड़े उठ-उठकर फ्लोर पर जाने लगे। शेखर भी रोजी के साथ उठा। बग़ल के सोफेवाली साँवली लड़की भी अपने यंग पार्टनर के साथ उठी। कमर में एक हाथ डालकर दूसरे से एक दूसरे के हाथ थामे, जोड़े थिरकने लगे। हॉल में पहले से ज्यादा शांति हो गयी थी। सभी आँखें उधर मुड़ गयीं। कंधों पर सर रखी सुन्दरियाँ विश्रान्ति की मुद्रा में पलके मूंदकर नाच रही थीं। कुछ ने ज्यादा पी ली थी, इसलिए कदम बहक रहे थे।

धीरे-धीरे गति तेज हो गयी। थिरकन बढ़ी, झूमकर तेज चक्कर लगाने लगे। उधर डायस पर अंग्रेजी युवती भी झूमकर गाते हुए थिरकने लगी। बैण्ड ने लय बदली। 'ट्विस्ट' होने लगा।

शरीर का हर अंग हिलोरें लेने लगा। कमर तेजी से डोलने लगी। साँवली लड़की एवं रोजी में जैसे कम्पटीशन छिड़ गया। इतने जोड़ों में सबसे अच्छा यही दोनों 'टिवस्ट' कर रही थीं। शेखर कुछ थका-सा प्रतीत हो रहा था। दोनों युवतियों का आँचल बार-बार नीचे सरक जाता। वे पल्ला सम्हालतीं, मगर दूसरे क्षण ही वह फिर बहक जाता।

रमेश की तो आँखें ही न टिक रही थीं। उसे लगा, पश्चिमी सभ्यता की प्रतीक वह आँग्ल युवती, डायस पर खड़ी, इन कठपुतलियों को अपने इशारों

पर नचा रही हैं। मृग-मरीचिका से भ्रमित ये भारतीय नवयुवतियाँ, दूसरों के इशारे पर नाच रही हैं क्योंकि ये प्रगतिशील कहलाना पसन्द करती हैं। इन्हें भय है, अगर ये समय के साथ तेज नहीं भागेंगी तो सभ्यता की रेस में बहुत पीछे छूट जायेंगी। अब जब सभी क्षेत्रों में भारत पश्चिम से प्रतियोगिता कर रहा है, तो भला इस क्षेत्र में वह पीछे क्यों रह जाय ?........

रमेश सोच रहा था—'वेदिंग–सूट' पहनकर स्वीमिंग-पूल में तैरनेवाली नयी नारी, मदिरा के घूँट पीकर सिगरेट की कश लगानेवाली भारतीय सुन्दरी, विदेशी संगीत की धुन पर कमर एवं वक्ष हिलाने-डुलानेवाली पढ़ी-लिखी नारियों की, वस्तुतः भारत को कृतज्ञ होना चाहिए,.......इन्होंने भारत को 'गोबर युग' से निकालकर स्पुतनिक युग में पहुँचा दिया है। विदेशी जो मिस भेजे की पुस्तक पढ़कर भारत को पिछड़ा हुआ, 'गोबर युग' में रहनेवाला देश समझते हैं...जब भारत के प्रगतिशील बड़े नगरों में, दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता में इन भारतींय अति-आधुनिकाओं के दर्शन करते हैं, तो उन्हें अपनी पूर्व-धारणा बदलनी पड़ती है। उन्हें विश्वास हो जाता है, भारत भी प्रगति की दौड़ में पीछे नहीं है। मैकाले की आत्मा को, क्लाइव एवं हेस्टिंग्स की औलाद श्रद्धांजलि देती है,....तुम्हारे उपकार से अंग्रेज जाति कभी उऋण नहीं हो सकती। भारत ने गाँधी-नेहरू के नेतृत्व में राजनीतिक स्वतंत्रता भले ही प्राप्त कर ली हो, मगर अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से 'पश्चिमी मानसिक दासता' से मुक्त होने में अभी सदियाँ लग जायेंगी।

वैण्ड रुका। स्वर-लहरियाँ थम गयीं।

थके-से जोड़े, अपनी-अपनी सीटों पर वापस आकर बैठ गये। रोज़ी रमेश की बगल में आकर सोफे पर बैठ गयी।

शेखर उसकी बगल में बैठ गया। वह थोड़ा हाँफ रहा था। रोजी ने पर्स से, सुगन्धित रूमाल निकाला। मोतियों की तरह चमकती पसीने की बूँदें पोंछी। फिर छोटे शीशे में अपनी प्रतिच्छवि देखकर, लिपिस्टिक ठीक की।

इसी बीच शेखर ने दो पेग़ खाली कर दिये। रोजी ने भी एक 'पेग़' लेकर, थकावट दूर की।

बैण्ड फिर बज उठा। कुछ नये जोड़े उठे। रोजी ने रमेश से प्रस्ताव किया, "विल यू ज्वाइन मी !"

"रमेश झेंपता हुआ बोला, "एक्सक्यूज मी, मैं कभी नाचा नहीं हूँ।"

"नेवर माइण्ड !" रोजी बोली, "चलिये, मैं आपको सिखाती हूँ।"

शेखर ने भी प्रोत्साहित किया, "येस, आज भगतजी को कलमा पढ़ा ही दो !"

साँवली लड़की, 'विग़-वास' के साथ फ्लोर पर जा चुकी थी। रोज़ी ने भी रमेश का हाथ पकड़कर खींचा। उसकी आँखों में कुछ ऐसा था कि रमेश पिघल गया। उस पर नशा-सा चढ़ गया। उसे लगा, उसके सारे आदर्श, सारे सिद्धान्त, सारे विश्वास''''एक दृष्टि में ही खण्डित हो गये। कैसे ठुकराये वह इस कोमल आमन्त्रण को ? कैसे झटक दे वह रेशमी कलाइयों के सुखद बन्धन को ?''''रोज़ी ने मोह का रङ्गीला मादक आवरण उस पर डाल दिया था। उसके पाँव काँपने लगे। गला सूखने लगा। जीभ तालू से चिपक गयी।

वह बेबस-सा उठा। शेखर ने ज़ोर से ताली बजायी। रोज़ी ने विजेता की तरह मुस्कराकर शेखर को देखा। शेखर ने मुस्कराते हुए, प्रशंसा से रोज़ी को देखा। आखिर तपस्या टूट ही गयी।

रमेश मन-ही-मन सोच रहा था, कितना कमजोर होता है आदमी ? अभी पाँच मिनट पहले ही वह क्या सोच रहा था।''''नारी में सचमुच कितना नशा एवं आकर्षण होता है !! तभी विश्वामित्र की तपस्या भी मेनका से खण्डित हो गयी।

रोज़ी एक गर्वीले विजेता की भाँति, रमेश की ठण्ढी हथेली को अपनी गर्म हथेली में पकड़े फ्लोर पर ले गयी। उसने धीरे से रमेश से कहा, "उधर देखो। उसी तरह मेरी कमर में एक हाथ डालो और दूसरा हाथ ऐसे पकड़ो !"

रमेश ने झिझकते हुए आज्ञा का पालन किया। रोज़ी नचाती, रमेश आकर्षण की डोर में बँधा नाचता। सभी सुन्दरियों ने बैण्ड की धुन पर, विश्रान्ति की मुद्रा में, पुरुषों की छाती पर, गाल एवं सर टिका दिये। रमेश को बिजली का करेण्ट लगा। टाँगे जोर से, बिना पिये ही काँपने लगीं। रोज़ी उसकी छाती

से चिपकी, डोल रही थी। उसकी धड़कन तेज हो गयी। उसने डरकर आँखें मूँद लीं।

जितना ही वह घबड़ाता, रोज़ी उससे और चिपटती जाती। उसे बहुत आनन्द मिल रहा था। रोज़ी को गर्व हो रहा था कि उसने एक ब्रह्मचारी की तपस्या भङ्ग कर दी।

पास ही वह साँवली लड़की 'विग-बॉस' से चिपटी फुसफुसा रही थी, "टेण्डर कल खुलेगा!"

"ओह, यस्!"

"मेरे हस्बैण्ड का ख्याल रखियेगा!"

"डोण्ट वरी!"

....

"तुम अच्छा डांस करती हो!"

"थैंक्स!"

"कल मिलोगी!"

"टेण्डर खुल जाने दो!"

"वी विल सेलीब्रेट टूगेदर!"

"वॉस ने भूखी आँखों से साँवली लड़की को घूरा। बन्धन कठोर हो गया। वह बुदबुदायी, "पसली की हड्डियाँ टूट जायेंगी!"

"आई एम गेटिंग मैड....!" वॉस ने विवशता प्रकट की!

इधर रमेश के पास दूसरा जोड़ा थिरकता आया। सरदार गोरा-चिट्टा था। फुसफुसाया, "कल सुना तुम्हारे हस्बैंड आ रहे हैं।"

सुन्दरी उदास हो गयी, "डोण्ट, बोर मी!"

इधर रोज़ी फुसफुसायी, "कैसा लग रहा है?"

रमेश के मुँह से अनायास निकल गया, "बहुत अच्छा, वेरी प्लीजेंट!"

"शादी हो गयी?"

रमेश के मुँह पर ताला लग गया।

"कभी किसी से 'लव' किया है?"

रमेश फिर चुप।

"मुझे तुम्हारे जैसे 'सिम्पुल फ्रेण्ड' अच्छे लगते हैं। यू आर वेरी गुड-फ्रेण्ड.... तुम कुछ नहीं जानते !"

रमेश ने अपना अज्ञान दूर करने के लिए रोज़ी को बाँहों में और ज्यादा कस लिया।

"डार्लिंग, यू विल किल मी !" रोज़ी बुदबुदायी।

बैण्ड रुका।

रमेश का स्वप्न टूट गया। उसे लगा, जैसे किसी ने उसे आकाश से जमीन पर पटक दिया। वापस अपनी सीट पर पहुँचा। प्यास से गला सूख रहा था। उसने पानी का गिलास उठाया। रोज़ी ने हाथ पकड़ लिया। उसने उसके आगे एक पेग बढ़ाया। रमेश पर नशा-सा चढ़ गया था। रोजी अगर उसे शराब की जगह जहर भी पिलाती, तो वह उस वक्त आँखें बन्दकर कृतज्ञ भाव से पी लेता।

रमेश को लगा, उसके अंग-प्रत्यंग में जैसे आग लग गयी हो। उसने दूसरा पेग भी खाली कर दिया। इस कड़ुआहट में भी कितना मीठापन था....!!

मानस-पटल पर....एक चित्र लहरा।

पत्नी....तीन बच्चों की माँ, माधवी ! बेडोल शरीर, आकर्षण-विहीन यौवन ....गृह-कलह ! कितना नीरस जीवन हो गया था। कोई आकर्षण ही नहीं ? ....कोल्हू के बैल की तरह, एक वृत्त में ही चक्कर देता उदास जीवन !! उदास दिन, नीरस रातें ! घिसटती-सिसकती जिन्दगी, जैसे कोई अनिवार्य बोझ हो, जो छोड़ते नहीं बनता, उठाये रहना पड़ता है, जैसे कोई आवश्यक मजबूरी हो !!

सोचने लगा, लोग बेकार आदर्शों की दुहाई देते हैं, नैतिकता और अनैतिकता का बेसुरा राग अलापते हैं, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के निरर्थक गीत गाते हैं।....आदर्शों के झूठे स्वप्न-लोक के नाम पर, जीवन का गला घोंटो, अतीत की जर्जर नैतिकता के नाम पर, सुख का तिरस्कार करो......भविष्य की कल्पना में, वर्तमान के यथार्थ से मुँह मोड़कर, अभाव एवं असन्तोष की चट्टान से सर फोड़कर, सिसक-सिसककर इस मूल्यवान् जीवन की थाती को नष्ट कर

दो''''यह कुछ नहीं, पलायनवाद है। जो सामने है, वही सत्य है, उसे स्वीकार करो, उन्हे भोगो''''यही जीवन है।

''''एक तरफ, जवानी का छलकता जाम, रोजी है''''दूसरी ओर सड़े-गले शताब्दियों पुराने जर्जर काल्पनिक आदर्शों की प्रतिमूर्ति, बीमार पत्नी है''''क्या ''''इस वर्तमान 'स्वर्ग' को वह इसलिए ठुकरा दे, क्योंकि वह किसी के साथ सात फेरों के बन्धनों से जीवन जकड़ चुका है।''''सत्य को स्वीकार न करना ही बहुत बड़ी विडम्बना एवं झूठ है ? यही पाप है''''।''''

कल्पना का शीशमहल टूटा।

रोज़ी का हाथ शेखर की मुट्ठी में था। रोज़ी उससे कह रही थी, "तुम आखिर कब आँख-मिचौनी का खेल खेलना बन्द करोगे !"

"यह खेल ही तो मेरी जिन्दगी है।"

"यह बहुत खतरनाक खेल है !" रोज़ी ने होंठों से सिगरेट का धुआँ छोड़ते हुए कहा, "किसी दिन खेल ही खेल में 'रांग नम्बर' मिल गया, तो क्या करोगे ?"

"शेखर को अपने पर विश्वास है !"

रमेश को रोजी की यह बेरुखी ठीक न लगी। बोला, "मिस रोज़ी, लीव हिम एसाइड ! उसे 'लव-गेम' खेलने दो। ही इज़ ए फूल।''''मैं तुमसे प्यार करता हूँ। आई ट्रस्ट यू''''लाइक गॉड।"

शेखर समझ गया, रमेश अपने होश में नहीं है। उसने धीरे से रोज़ी को आँख मारी। रोज़ी ने प्रेम का माया-जाल फैलाते हुए कहा, "येस डार्लिंग ! मैं भी तुम्हें बहुत 'लव' करती हूँ। शेखर इज़ ए डफर''''!"

रमेश ने साग्रह कहा, "आज तुम मेरे साथ होटल चलना। आई विल मेक यू क्वीन ?"

शेखर को हँसी आ गयी। आज दोपहर में जो आदर्शों की दुहाई दे रहा था, जो व्यक्ति कल तक उसे नैतिकता का उपदेश दिया करता था, वही आज किस धरातल पर उतर आया है। उसने मन-ही-मन अपने को धिक्कारा। उसी ने रोज़ी से आग्रह किया था नाचते वक्त, मेरा दोस्त रमेश इस नये वातावरण का बहुत बड़ा आलोचक है। सिगरेट, शराब और औरत से सख्त परहेज है।

पुरानी सभ्यता एवं संस्कृति का हमेशा ढोल पीटता रहता है। उसे अगर तुम अपने साथ नचा सको तो····?"

रोज़ी आत्मविश्वास से बोली, "आई विल मेक हिम मैड !' (मैं उसे-पागल बना दूँगी !)

और सचमुच रमेश की दशा इस वक्त पागलों-सी हो रही थी। वह रोज़ी का दीवाना बन गया था। कोई उससे इस वक्त घर-बार, औरत-बच्चे सब छोड़ देने को कहता, तो वह सहर्ष तराजू के दूसरे पलड़े पर रोजी को खड़ा करके चिल्ला-चिल्लाकर कहता, देखो कितना वजन है इस आधुनिका में ? इसके अतिरिक्त दुनिया में रखा भी क्या है ? सब कुछ निरर्थक और फीका है।····

उन्मुक्त-सा वह रोज़ी का हाथ पकड़ता हुआ बोला, "मेरे साथ चलो !"

शेखर को स्थिति की गम्भीरता समझते देर न लगी। वह उसे साथ लेकर बाहर आया। टैक्सी में साथ ही रोज़ी को भी बिठाया। रमेश नशे में अपनी चेतना लगभग खो चुका था। वह लुढ़क गया।

रमेश को होटल छोड़ने से पहले, रास्ते में रोजी को कनॉट-प्लेस में उसने उतार दिया।

रमेश को बड़ी मुश्किल से बेयरे की मदद से उठाकर, ऊपर उसके कमरे में ले जाकर शेखर ने डाला।

लौटते वक्त शेखर को बड़ी आत्म-ग्लानि हो रही थी। उसका सारा नशा काफूर हो चुका था। विश्वास की मूरत को तोड़कर उसे क्या मिला ?····नशा उतरने पर रमेश क्या सोचेगा उसके सम्बन्ध में ?····

इधर घर लौटते वक्त रोजी भी बड़ी उद्विग्न हो रही थी। इतने सरल और निष्कपट व्यक्ति को छलकर उसे क्या मिला ?····आज तक मिलनेवाला हर व्यक्ति उसे बहकाकर साबूत ही निगल जाना चाहता था, हर मोड़ पर उसे ठगने और लुभाने को पुरुष छद्म-वेश में उपस्थित रहता····मगर आज उसने स्वयं एक छलना का रोल अदा किया ? एक भोले-भाले निरीह पुरुष को रूप-जाल से दिग्भ्रमित कर, पथभ्रष्ट किया। अगर दूसरे आधुनिक पुरुषों की तरह, यह भी

सुख को सुरा और सुन्दरी में ढूंढ़ने लगा····तो इसके छोटे-से परिवार पर वज्र-पात ही हो जायेगा····

रोजी को लगा, जैसे उससे सचमुच आज कोई अनचाहा पाप हो गया हो।

● ● ●

५

छवि को शेखर से मिले एक पखवारा हो गया।

उसने कनॉट प्लेस के कई चक्कर लगाये। आफिस में भी तीन-चार बार फोन किया। मगर कुछ ठीक पता नहीं चला।

शेखर दिल्ली से बाहर जाता, तो उसे पहले से सूचित कर देता था। जरूर कोई बात होगी। एक आशंका से मन काँपा। कहीं बीमार न पड़ गया हो?···· शेखर के घर जाने की वह कल्पना भी न कर सकती थी। शेखर ने मां के स्वभाव का उसे पूरा परिचय पहले ही दे दिया था।

आजकल वह अपनी बड़ी बहन, डाक्टर अनुराधा विश्वास के बंगले पर रह रही थीं। उसका बंगला अस्पताल के कम्पाउण्ड में ही था एक किनारे पर। छवि अक्सर अपनी प्यारी दीदी के पास रहने चली आती।

दीदी वय में उससे जरूर बड़ी थी, मगर वह अपनी बात न छिपाती थी। उससे दिल की कोई भी बात न छिपाती थी। दोनों रात को एक ही बिस्तर पर साथ सोती थीं।

अनुराधा ने देखा, छवि हर वक्त गुमसुम खिड़की के किनारे बैठकर खुले लॉन एवं फूलों की क्यारियों को, भटकी निगाहों से निहारा करती। हमेशा चहकनेवाली छवि को इतना उदास इससे पहले उसने कभी न देखा था।

एक दिन सुबह जलपान के समय उसने पूछ ही लिया, "क्या बात है छवि, आजकल 'फिलासफर' बनती जा रही हो।"

छवि को लगा, चोरी पकड़ी गयी। उसने मुस्कराने का प्रयत्न किया, "नहीं दीदी, ऐसे ही सोचती हूँ, जीवन का उद्देश्य क्या है ?...."

चाय की चुस्की लेती हुई अनुराधा बोली, "जब लड़की को यह प्रश्न सताने लगे, तो इसका सीधा मतलब होता है, उसे जीवनसाथी की जरूरत पड़ गयी है !"

'ना....ना, दीदी। मुझे गलत न समझो। छवि के दिल का प्याला छलक गया। बोली, "शादी का सीधा मतलब तो बर्बादी होता है। जीवन की स्वतन्त्रता गँवानी हो, तो फिर गले में शादी की फाँसी का फन्दा डालना चाहिए।"

"अनुराधा मुस्कराती हुई बोली, "छवि, मैं डाक्टर हूँ। मरीज कितना छिपाये, मैं लक्षण देखकर बता सकती हूँ, बीमारी क्या है ?" मैं समझ गयी, तुम किसी के 'प्यार' के चक्कर में पड़ गयी हो ?........कौन है वह ?........मुझे बताओ, मुझसे कुछ छिपाने की कोशिश मत करना।....मैं तुम्हारी मदद करने का प्रयत्न करूँगी !...."

न चाहते हुए भी छवि की आँखों से मोती टपकने लगे।

"धत् पगली, रोती है।" अनुराधा ने मीठी झिड़की दी, "अगर प्यार का रोग पाल लिया, तो तुझे भी टी० बी० हो जाएगी। शादी से तुझे चिढ़ है, उसे तू फाँसी का फन्दा समझती है, फिर भला 'प्यार' के बदले में तू चाहती क्या है ?...."

रूमाल से गीली आँखें पोंछती वह बोली, "प्यार कोई नफे-नुकसान की दुकान थोड़े ही है दीदी ? उसमें स्वार्थ का स्थान कहाँ ? प्यार तो सिर्फ प्यार के लिए ही किया जाता है ?...."

अनुभवी अनुराधा ने बताया, "तू अभी बहुत बच्ची है। यह जरूरी नहीं कि जो तुम्हारे सिद्धान्त हों, उन पर प्रेमी का भी विश्वास हो। कुछ लोग शरीर को ही सत्य मानते हैं। उनके प्यार का लक्ष्य, शरीर को प्राप्त करना ही होता है।

वे भला, त्याग, बलिदान और समर्पण के गीत न गायें, तो उनका मतलब कैसे पूरा हो ? 'लव फार लव सेक....।' यह विचार कितना ही ऊँचा क्यों न हो, आज के भौतिक युग में व्यावहारिक कदापि नहीं कहा जा सकता ।"

छवि काँप उठी । उसे करेण्ट-सा लगा—"कहीं शेखर भी उसके शरीर का ही लोभी न हो ?....विना सात फेरों के बन्धन के ही, शरीर पर स्वामित्व प्राप्त हो जाय, तो भला कौन परिवार का बोझ उठाने की मूर्खता करेगा ?....नारी को छलने के लिए ही, पुरुष नारी-स्वतन्त्रता का झण्डा ऊँचा उठाता है । यह भी शोषण का नया रूप हैं । क्या स्वेच्छाचारिता ही स्वतन्त्रता की पूरक है ?.... इस शरीर का कुछ भी मूल्य नहीं !!"

उसे लगा शरीर के आकर्षण से जो प्यार प्रारम्भ होता है, वह शरीर पर ही आकर समाप्त भी हो जाता है । अशरीरी प्यार का अस्तित्व ही कहाँ ?

अनुराधा ने जिद की, "क्या नाम है उसका, जिसने तेरा सुख-चैन छीन लिया ?"

छवि ने शरमा कर निगाहें झुका लीं ।

अनुराधा को हँसी आ गयी । बोली, "तुझे पता ही है, मैंने विवाह न करने का अन्तिम निश्चय कर रखा है। इसलिए मुझसे कुछ छिपाने की जरूरत नहीं।"

धीरे से छवि के मुँह से आवाज निकली, "शेखर ।"

"नाम तो बहुत प्यारा है !" "अनुराधा को आनन्द आ रहा था। फिर पूछा, "नौकरी करता है या बिजनेस ?"

"नौकरी ।"

"सरकारी या प्राइवेट !"

"प्राइवेट !" छवि बोली । उसकी झिझक दूर हो गयी । उसने आगे कहा, "बहुत अच्छी नौकरी है । खूब कमाता और खूब खर्च करता है ।"

"तुझ पर भी कुछ खर्च किया ।

छवि चुप । क्या जवाब दे ?

"कितना बैंक बैलेंस है ?"

"छवि को गुस्सा आ गया । बोली, "जिसे अपना ही बैंक बैलेन्स याद न रहता हो, वह भला दूसरे से कैसे पूछ सकती है ?"

"कार है उसके पास ?"

छवि झुंझला उठी । दीदी ने बेकार डाक्टरी पढ़ी । वकील होती तो ज़्यादा अच्छा था । उत्तर दिया, "स्कूटर है वैस्पा ।"

अनुराधा ने सेब काटा । फिर गम्भीरता से बोली, "देखने-सुनने में कैसा है ?"

छवि के जी में आया, कह दे कि तुम देखते ही लट्टू हो जाओगी, तुम्हारा व्रत टूट जायेगा मगर प्रगट रूप से बोली, "तुम देखकर फैसला कर लेना ।"

अनुराधा कुछ झेंप गयी । अस्पताल का समय हो गया था । उठती हुई बोली, "तुम मेरी गाड़ी ले जाओ, उसे शाम को टी पर आमंत्रित कर देना ।"

दीदी के पास उत्तर सुनने का अवकाश नहीं था । छवि भी उठकर पलंग पर लेट गयी । आलस्य से बदन टूटा जा रहा था । मन की अन्तर्धारा पर नये-पुराने चित्र तैर रहे थे ।

शेखर से उसकी पहली मुलाकात भी कितनी अजीब थी ? उन दिनों वह मिराण्डा कॉलेज में पढ़ती थी । उसकी एक फैशनेबुल सहेली थी लेखा वास्वानी । उसने उसे चाय पर आमंत्रित किया था । कॉलेज से ही वह उसके साथ 'बोल्गा' में चली गयी थी । वहाँ लेखा के तीन-चार मित्र पहले से ही इंतजार कर रहे थे । छवि उन्हें देखकर बहुत घबड़ा गयी । उनकी आँखों के भाव उसे अच्छे नहीं लगे । सभ्यतावश उसे एक ही टेबुल पर बैठना पड़ा । मन-ही-मन वह लेखा को हजारों गालियाँ दे रही थी। उसके चरित्र पर उसे जो सन्देह था, वह अब विश्वास मे परिवर्तित हो गया ।

एक युवक ने लेखा से प्रस्ताव किया, "आज चलो कालकाजी के दर्शन कर आएँ, मंगलवार भी है ।"

उसके मुहँ से शराब की गन्ध निकल रही थी, छवि समझ गयी, कालकाजी के इस नकली भक्त की आँखों में क्या है ? उसे भागने का कोई रास्ता ही नहीं समझ में आ रहा था । उसे लगा, चिड़िया जाल में फँस गयी है । वह कितना भी फड़फड़ा ले, मुक्ति आसान नहीं है । सामने एक कोने में शेखर बैठा चाय पी रहा

था। छवि ने सोचा, देखने में तो यह भला युवक है। शायद मेरी कुछ मदद करें। वह धीरे से लेखा के कान में फुसफुसायी, "मेरे एक दूर के रिश्तेदार का लड़का सामने बैठा है। अगर उसने मुझे देख लिया तो फिर घर में तूफान मच जायेगा। मैं अभी उसे विदा कर आती हूँ।"

छवि काँपते कदमों से उस अपरिचित शरीफ-से दीखनेवाले नवयुवक के पास गयी। नमस्कार कर उसकी बगल में बैठ गयी। शेखर घबड़ा गया। हकलाता-सा बोला, "देखिये आपको कुछ गलतफहमी हुई हैं। मैं वह नहीं हूँ जिसे आप समझ रही हैं।"

आई एम साँरी। घबड़ायी हुई छवि बोली, "इस वक्त मुझे आप की सहायता की सख्त जरूरत है। कुछ गुंडे मुझे यहाँ से उड़ा ले जाना चाहते हैं....आप जल्दी से बिल चुकता कर, मुझे यहाँ से निकाल ले चलिये। उन्हें यह नहीं पता चलना चाहिए कि मैं आपके लिए अजनबी हूँ।....प्लीज बी काइंड....!"

शेखर ने छवि की भोली आँखों में झाँका। एकदम निर्मल, निष्कपट !! सोचा—कहीं यह लड़की मेरे साथ कोई छल तो नहीं कर रही है? शेखर ने झिझकते हुए कहा,—"देखिए, अभी कुछ दिन पहले ही एक नवयुवक को जो रात देर से दफ्तर से वेतन लेकर घर लौट रहा था, एक अँधेरे मोड़ पर, आपकी तरह एक सुन्दर लड़की मिली। लड़की की सहायता का याचना पर उसे अपनी साइकिल पर बैठाकर, चार-पाँच कदम ही आगे बढ़ा होगा कि उसे गुण्डों ने घेर लिया। लड़की भी उसी गैंग की थी। उसने रो-रोकर कहना शुरू किया कि यह मुझे भगाकर ले जा रहे हैं। बस फिर क्या था, गुण्डों ने दो-चार हाथ लगाये भी तथा पुलिस स्टेशन की धौंस दिखाकर रुपया-पैसा, साइ-किल सभी छीन ली। यह खबर अखबारों में छपी थी, आपने भी पढ़ी होगी। अब बताइए, ऐसी स्थिति में कौन साहसी युवक, एक अपरिचित नवयुवती की मदद करना चाहेगा?"

छवि की आँखें आर्द्र हो उठीं, उसने रूंधे गले से इतना ही कहा, "क्या आप भी मुझे ऐसी-वैसी लड़की समझते हैं? मैं मिराण्डा कॉलेज में पढ़ती हूँ।"

"आपका नाम?"

"छवि विश्वास।"

"मैं शेखर हूँ।"

"…. …. …. ।"

बिल चुकाकर शेखर उठा। छवि उसके साथ वाहर निकली। शेखर ने स्कूटर स्टार्ट किया, छवि पीछे वैठ गयी।

"किधर चलना हैं ?"

"कोरोलबाग !"

स्कूटर हवा से बात करने लगा। छवि को बड़ा अजीव-सा लग रहा था। शेखर ने पूछा, "अगर मैं आपको भगाकर कहीं ओर ले जाना चाहूँ तो ?"

"आप ऐसा नहीं कर सकते !"

"मेरे माथे पर शराफत का कोई साइनबोर्ड लगा हैं क्या ?" शेखर ने मुस्कराकर पूछा।

"देखने में गुण्डे भी तो नहीं लगते !" छवि ने भी व्यंग्य किया।

"संसार में बहुत-सी चीजें ऐसी होती हैं जो ऊपर से जैसी दीखती हैं, भीतर से वैसी नहीं होतीं।" शेखर बोला, "वेर ऊपर से कितना मुलायम लगता हैं, मगर उसकी गुठली कितनी कठोर होती है। नारियल ऊपर से कितना रूखा-सूखा लगता है, मगर अन्दर से कितना तरल होता है !…."

"आपकी अपने वारे में क्या राय है !" छवि ने व्यंग्य-बाण छोड़ा।

"एक वहुत कमजोर दिल का साहसी इन्सान हूँ।" शेखर ने परिचय दिया।

"साहस तो आपका होटल में ही देख लिया था।" छवि ने ताना दिया।

"मैं दिल्ली की लड़कियों से वहुत डरता हूँ। कव वे रंग बदल लें, ईश्वर भी नहीं जानता ! कभी टेम्प्रेचर चालीस डिग्री तो कभी एकदम पारा एक सौ दस डिग्री पर पहुँच जाता है। 'वस' में खड़ी रहें और आप सीट न खाली करें तो 'इडियेट' की उपाधि देने में कृपणता नहीं दिखायेंगी। यदि आपने 'त्याग' का सार्वजनिक प्रदर्शन करते हुए, उनके लिए स्थान छोड़ दिया तो वे बिना

धन्यवाद दिये उस जगह पर जम जाएँगी। आपकी तरफ ऐसी दृष्टि से देखेंगी, मानो आप बहुत बड़े 'मूर्ख जानवर' हों !...."

छवि को हँसी आ गयी। उसे शेखर दिलचस्प आदमी लगा। उसने नहले पर दहला जमाया, "और दिल्ली के मॉडर्न मजनू ? 'बस' में चाहे जितनी भी सीटें खाली हों, वे हमेशा किसी लड़की के साथ जाकर बैठेंगे। फिर 'बस' के हर हचकोले के साथ, सावधानीपूर्वक असावधानी का प्रदर्शन करते हुए, उस पर लुढ़कते रहेंगे। जो अपना संतुलन भी नहीं रख सकते, उन्हें दूसरे की आलोचना करने का क्या अधिकार ?...."

करोलबाग में अजमल खाँ रोड पर छवि उतर गयी। धन्यवाद देती हुई बोली, "आपको कष्ट के लिए धन्यवाद !"

"धन्यवाद बहुत सस्ता शब्द है, मेमसाहब ! इससे पेट्रोल नहीं खरीदा जा सकता ?"

छवि को हल्का 'शॉक' लगा। उसे शेखर से इतने 'चीप' और रूखे व्यवहार की आशा न थी। उसने पर्स खोला, 'कितने रुपये पेट्रोल के लिए दे दूँ ?"

"स्कूटर में इतना पेट्रोल है कि आपको मेरठ तक पहुँचा सकता हूँ !" शेखर बोला, "सिर्फ एक प्याला चाय ही इस वक्त बहुत होगी !"

छवि झेंपती हुई बोली, "आप मजाक अच्छा कर लेते हैं।"

इसके बाद दोनों एक रेस्ट्राँ में गये। बेयरा आया। छवि ने पूछा, "क्या खायेंगे ?"

"नमक खा लूँगा, तो फिर आपको रुपये भी पहुँचाना पड़ेगा ! चाय ही चलेगी।"

छवि ने चाय का आर्डर दिया। शेखर ने सफाई दी, "वहाँ आपने मेरी चाय छुड़वा दी थी। मैंने सोचा, घाटा क्यों उठाऊँ।....आप फिर न जाने कब मिलेंगी ? दिल्ली में तो आदमी की तभी तक पूछ होती है, जब तक उससे कोई काम निकलता है। बिना मतलब तो पड़ोसी भी एक दूसरे को नहीं पूछते ।....आपसे अचानक ही भेंट हो गयी, फिर इतनी बड़ी दिल्ली में मैं आपको ढूंढ़ने कहाँ जाऊँगा ?"

शेखर के शब्द छवि को छू गये। उससे कोई उत्तर ही न बन पड़ा। एक पंक्ति याद आयी····'आज के बिछुड़े, न जाने फिर कब मिलेंगे ?·······

छवि के मना करने पर भी शेखर ने ही चाय के पैसे दिये। बोला, "आपने चाय में साथ दिया, यही बहुत है। दिल्ली में 'लिफ्ट' माँगनेवाली लड़कियों की कमी नहीं, मगर वे फिर उतरकर पीछे मुड़कर देखती भी नहीं। 'धन्यवाद' देते वक्त वे मन-ही-मन सोचती हैं, आज खूब 'उल्लू' बनाया जनाब को ?····" छवि नमस्कार करती हुई बोली, "मुझे भी आप वैसी ही कोई स्वार्थी लड़की मत समझ लीजिएगा। मुझे आप से कभी भी मिलकर प्रसन्नता होगी !····"

"मैं आपको कनॉट प्लेस में अक्सर दिखायी पड़ सकता हूँ। वैसे हर शाम मैं गेलार्ड या गे-टाइम में आपको जरूर बैठा मिलूँगा। होटल जाना मेरी 'हॉबी' है। वहाँ इत्तफाक से आप-जैसे दिलचस्प विश्वसनीय मित्र भी मिल जाते हैं" शेखर बोला, "अगर जिन्दगी में फिर कभी आपके काम आ सका, तो मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी। ·······"

यह थी शेखर से प्रथम मुलाकात।

छवि को लगा, वह अनचाहे ही उसकी ओर दिन-प्रति-दिन आकर्षित होती गयी। पहले कभी-कभी जाने-अनजाने मुलाकात हो जाती। फिर प्रोग्राम बनते, सिनेमा, क्लब और पिकनिक के। परिचय घनिष्ठता में परिवर्तित हो गया। और आज छवि बिना शेखर के कुछ भी सोच नहीं सकती थी।

उसे लगा, वह पतंग है और उसकी डोर शेखर के हाथ में है।

× × ×

शाम हो चली थी। छवि तैयार होकर बाहर निकली। ड्राइवर गाड़ी 'पोर्च' में लाया। छवि ने उससे कहा, "तुम वहीं रुको, मैं खुद 'ड्राइव' करूँगी !"

छवि को दीदी की सफेद स्टैंडर्ड गाड़ी बहुत पसन्द थी। उसमें 'वाई' कम्पनी का कार-रेडियो भी लगा था। बड़ी सुरीली ध्वनि थी। रेडियो ऑन किया। गाना बज रहा था—

'मेरी आँखें बनी दीवानी,
पहले लायी आग हृदय में

फिर भर लायी पानी,
मेरी आखें बनी दीवानी ।'

उसे लगा, जैसे इन पक्तियों में उसकी बेबसी और दर्द ही मुखर हो उठा है । यह गाना वह जब भी सुनती, उसे बहुत अच्छा लगता ।

'रीगल' के सामने गाड़ी खड़ी कर दी । 'गेलार्ड' और 'गे-टाइम' का चक्कर लगाया । शेखर का कहीं पता न था । एक कप 'कॉफी' के लिए वह 'गे-टाइम' में बैठ गयी ।

शाम का वक्त था । भीड़-भाड़ ज्यादा थी । एक नवविवाहित जोड़ा आया । बैठने को तिल-भर जगह नहीं थी ।

छवि की टेबुल पर सामने का सोफा खाली था । झिझकते हुए युवक ने बैठने की इजाजत माँगी । छवि ने सिर हिलाकर स्वीकृति दे दी । दोनों धन्यवाद देकर बैठ गये । छवि की दृष्टि लाल चूड़ों पर पड़ी । उसे रोमाँच हो आया । कभी उसकी हथेलियों में भी ऐसे ही मेंहदी लगेगी तथा कलाइयों में लाल चूड़े होंगे !....उसकी बगल की खाली सीट फिर भी 'कोई' बैठा होगा !

कौन हो सकता है वह ? शेखर !....मगर वह तो शादी ही नहीं करना चाहता । कमजोर पड़ते विचारों को सहारा दिया—"सभी शादी से नफरत करने-वाले क्वाँरे नहीं बैठे रहते ।" छवि ने कॉफी 'सिप' करते देखा, युवक ने पत्नी की की एक कलाई कसकर पकड़ रखी थी । पती-पत्नी साथ हो, तो भला चुप कैसे बैठ सकते हैं ।

"मैं तो बहुत बोर हो गया ।" युवक बोला ।

"इतनी जल्दी !" पत्नी ने शरारत से पूछा ।

"यह भी कोई जिन्दगी है ! कहने को तो इतनी बड़ी दिल्ली, मगर रहने को एक कमरा, जिसमें तीन-तीन परिवार ! कैसे जिन्दा रह पाते हैं ? मैं तो ससु-राल में दस दिन रहने का प्रोग्राम बनाकर आया था, मगर अब तबियत भागने की हो रही है ।"

"इतनी जल्दी !"

"ससुराल है, होटल में ठहर नहीं सकते ! मगर एक कमरे में सास-ससुर, साले-सलहज, और छोटे साले-सालियों के बीच सोया भी कैसे जा सकता है ?" युवक ने आवेशपूर्वक कहा ।

"कभी सोचा है, मैंने बीस वर्ष उसी कमरे में कैसे काटे हैं ?" युवती ने प्रश्न किया ।

"या तो कोई एकदम निर्लज्ज हो या फिर आँखे मूँदकर सोनेवाला ब्रह्मचारी !" युवक ने उच्छ्वास प्रकट किया, "अपने बस में तो एक दिन भी रहना संभव नहीं। मेरा तो दम घुट जाएगा। यह घर है या नरक ? वह घर क्या, जहाँ स्त्री-पुरुष, पती-पत्नी को एकान्त में दो बात करने की स्वतन्त्रता न हो ? कैसे रहते हैं तुम्हारे भाई-भाभी ? यह जीवन नहीं, नरक है। ऐसी दिल्ली को दूर से नमस्कार है।....यह तो ऐसे ही हुआ, जैसे कोई कहे, मेरा बेटा इंगलैण्ड गया हुआ है। और वह वहाँ होटल में जूठी प्लेटें साफ करता हो.... भगवान ने यह तो कसम नहीं दी थी, बेटा दिल्ली के तबेलों में जिन्दगी काटना। मेहनत कर कहीं भी रहकर पेट भरा जा सकता है। मगर जहाँ पति-पत्नी के लिए एकान्त न हो, वह घर नहीं, जेल है।"

युवती ने गुस्से पर ठण्ढा पानी डाला, "भाई-साहब और भाभी भी उसी घर में रहते हैं तथा दो बच्चों के होते हुए भी आपको उनके दाम्पत्य-सुख के सम्बन्ध में शंका है ?"

छवि 'कॉफी' खत्म कर चुकी थी। उसे इनकी बातें बहुत दिलचस्प लग रही थीं। मगर, बिल चुकाकर बैठना भी अशिष्टता होती।

शेखर नहीं मिला।

लौटते वक्त छवि सोच रही थी, अभी जो संक्षिप्त वार्तालाप उसने सुना, वह एकदम से नग्न यथार्थ है। पुरानी दिल्ली में लाखों सभ्य परिवार, आर्थिक कारणों से छोटी कोठरियों में कुत्ते-बिल्ली, कीड़े-मकोड़े की तरह दयनीव जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके जीवन में कुछ भी आकर्णण नहीं, कुछ भी रोमांस या नयापन नहीं। वे जीवन की गठरी को एक अनिवार्य बोझ की तरह लादे, भारी कदमों से आगे रेंग रहे हैं। उन अभागों को यह भी नहीं पता कि जीवन का लक्ष्य क्या

है ?·······वे शायद इसी संतोष से जीते हैं कि उनका प्राणांत महानगरी दिल्ली में होगा, जहाँ की मिट्टी और जल में, गाँधीजी का पार्थिव शरीर एकाकार हो चुका है।

भारतीय इस लोक के सारे दुःख, अन्याय और अत्याचार इसी विश्वास से संतोषपूर्वक झेल लेता है कि उसका परलोक शायद सुधर जायेगा ?

● ● ●

६

शेखर के ज़ीवन का प्रमुख सिद्धान्त एक ही था, 'ईट, ड्रिंक ऐण्ड बी मेरी !' ····(खाओ, पियो और मस्त रहो !)

कॉलेज छोड़ते ही उसे बम्बई में नौकरी मिल गयी। नौकरी अच्छी थी, खर्च से ज्यादा तनख्वाह मिलती थी। इसलिए मनचले मित्र मिले और उनकी सोहबत में उसने पीना-पिलाना सीखा।

दिल्ली पहुँचकर उसके जीवन में दूसरा बड़ा परिवर्तन आया। कुछ बड़े अच्छे, ऊँचे परिवार की सम्य, सुसंस्कृत एवं अति आधुनिक लड़कियों से उसका निकट परिचय बढ़ा। वह एक नयी उलझन में फँसा। किसे अपना ज़ीवन-साथी चुने ?

माँ शादी की रट लगाये हुए थी। वह किसी अपरिचित कन्या के लिए अपने जीवन को जुए के दाँव पर लगाने का खतरा मोल नहीं लेना चाहता था। जो परिचित थी, उनका चरित्र सन्देह से परे न था। अधिकांश वाचाल और 'फ्लर्ट-गर्ल' थीं। अगर वे उससे घनिष्ठता रख सकती हैं, तब वह कैसे विश्वास

कर ले कि उनका दूसरे मित्रों से ऐसा निकट सम्बन्ध नहीं होगा ? सिगरेट और शराब से परहेज न करनेवाली बहू को कौन भारतीय माँ आशीर्वाद देगी ?

अपवाद सिर्फ एक ही थी, छवि विश्वास !

कुछ साँवली जरूर थी, मगर नाक-नक्श में किसी से कम नहीं। आधुनिक होते हुए भी भी 'फ्लर्ट' नहीं। वाचाल होते हुए भी उद्दण्ड नहीं। स्वतन्त्रताप्रिय होते हुए भी स्वेच्छाचारी नहीं ! शंकालु होते हुए भी ईर्ष्यालु नहीं ! .... एक निष्कपट सरल लड़की, जिसने कभी शेखर से कुछ छिपाया नहीं। उसके लिए वह एक खुली किताब थी, वह उसका हर पृष्ठ पढ़ चुका था। न कहीं कुछ बनावट; न कहीं दुराव-छिपाव।

मगर उसके सम्पन्न पिता क्या उसे छवि के उपयुक्त 'वर' स्वीकार करेंगे ?

फिर माँ पञ्जाबी और उसके पिता बङ्गाली ! एक ही देश के दो विभिन्न छोरों के निवासी। एक ही माँ की सन्तान होते हुए भी एक-दूसरे से कितनी दूर ?....

वह सोचने लगा....मगर भारत की आज़ादी के लिए केवल लाला लाजपतराय ने ही क़ुर्बानी नहीं दी, सुभाषचन्द्र बोस ने भी जान दी है। गुरु नानक की तरह ही पूज्य रामकृष्ण परमहंस भी थे। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की गीताञ्जलि पञ्जाब के लिए भी उतनी ही मूल्यवान् पुस्तक है, जितनी बङ्गाल के लिए। देश के बँटवारे के मर्मान्तक घाव पञ्जाब ने ही अकेले नहीं सहे, धर्म के नाम पर रावी और चेनाव का पानी ही खून से लाल नहीं हुआ....बल्कि बङ्गाल के दामन पर भी खून के दाग़ लगे हैं, उसकी धरती पर भी लाशों के पहाड़ लगे हैं, उसका सीना भी देश के बँटवारे से चाक़-चाक हुआ है।....

जब पञ्जाब और बङ्गाल का इतिहास एक है, वर्तमान मिला-जुला है, भविष्य साथ जुड़ा है....दोनों ही भारत की विशाल आत्मा के ही जाग्रत अंश हैं, तो फिर शेखर और छवि ही दूर क्यों रहें ? प्रान्तों की खाईं उनके प्यार के पौधे को बढ़ने से क्यों रोकें ?....

मगर छवि ?

वह विवाह को जीवन का अन्तिम पड़ाव मानती है।

इसका मतलब, उस पड़ाव तक पहुँचते शेखर की जीवन-संध्या आ पहुँचेगी····? माँ इतनी लम्बी प्रतीक्षा नहीं कर पाएँगी····और शायद बहू की साध लिए ही वे इस दुनिया से एक दिन उदास होकर रूठ जाएँ।

शरीर की प्यास बुझ जाती है, मगर आत्मा की प्यास····?

शेखर को अक्सर ये प्रश्न एकान्त में कचोटते रहते! उसे लगता, दिमाग की नसें फट जाएँगी। वह बहुधा इसीलिए गम गलत करने को शराब के घूँट पी लेता।

दो दिन की जिन्दगी है, ऐसे ही हँसते-खेलते कट जाएगी ?.... यह शादी का चक्कर तो बहुत बेढंगा है।····दूसरों से मिलने-जुलने, हँसने-बोलने की आजादी समाप्त हो जाएगी। पत्नी के रूप में एक नया पहरेदार आ जाएगा, जो पति की स्वतन्त्रता को कभी क्षमा नहीं करेगा।—विवश हो पत्नी के आँचल में सारे संसार के सुख की तलाश करनी पड़ेगी ···· और तब फिर नये कैलेण्डर की तरह, नये वर्ष और नये बच्चे आएँगे ? ···· बच्चे बीमारी, पढ़ाई, कपड़ा, फीस ····खर्च बढ़ता जाएगा, साधन सीमित होंगे, सुख के साधन संकुचित होते जायेंगे····जीवन परिवार के छोटे-से वृत्त में ही केन्द्रित हो जाएगा।

मगर आखिर सुख है क्या ? सुख है कहाँ ?····सुन्दरी की गर्म बाँहों में, तपते होंठों में, वासना से सुर्ख आँखों में, नंगे उफनते वक्ष में ? गोल, भारी नितम्बों में····या ?····

खनखनाते सिक्कों में हरे-लाल-नीले करारे नोटों में, रिश्वत, चोरबाजारी और जुए से एकत्र की हुई दौलत में ? या····। अंगूर की देशी-विलायती मदिरा में, मदहोश बनानेवाले नशे में, क्लबों में, गूँजते कहकहो में, रेस्तराँ में बजते बैण्डों में, संगीत की धुन पर थिरकती सुन्दरियों के नूपुरों में या होटलों के मुलायम नर्म बिस्तर पर हर रात साथ सोनेवाली नयी जवान छोकरी की बाँहों में ?····?

शायद कहीं नहीं।

....यह सुख नहीं, सुख की मृग-मरीचिका है।

शेखर को भी 'सुख' की तलाश थी। ऐसे सुखों की जिसकी परिभाषा भी वह नहीं जानता था। वह राही था। मगर उसे मंजिल का पता न था। फिर भी वह चलते रहना चाहता था क्योंकि उसे पता था···मंज़िल तक यात्री को खुद जाना पड़ता है, मंजिल स्वयं चलकर राही के पास कभी नहीं आती। इसलिए वह नित नये प्रयोग करता, यह जानते हुए भी कि जीवन वहुत बहुमूल्य होता है। हो सकता है किसी दिन प्रयोग में वह स्वयं टूट जाय, असमय ही यह जीवन-धन चुक जाय, तलाश में ही वह भटक जाय और ऐसी राह पर बहक जाय जिसका कोई अन्त नहीं, जिसकी कोई मंजिल नहीं···और तव शायद उसके जीवन-दीप का तेल ही चुक जाय··· ।

मगर वह एकदम बेफिक्र और मस्त रहता !

बने-बनाये पुराने रास्तों पर तो सभी चलते हैं, मगर संसार में उनका जीवन सफल माना जाता है, जो खुद अपने लिए नयी राह वनाते हैं। वह भी अपने लिए नयी राह बनायेगा।····

जिन्दगी कोई फार्मूला नहीं, यह गणित का खेल नहीं, व्याकरण का कोई सिद्ध नियम नहीं। एक प्रयोगशाला है, खुला रंगमंच है। पात्र आते और जाते हैं। कुछ सीधे, सरल एवं आज्ञाकारी पात्र होते हैं। निर्देशक की हर आज्ञा का पालन करते हैं। उसकी इच्छा एवं विधान के अनुसार, समय से जीते और मर जाते हैं। उसके इशारे पर रोते और हँसते हैं। दो और दो चार होता है, इस पर विश्वास कर, सुखी एवं संतुष्ट रहते हैं। मगर कभी शेखर जैसे विकट और विलक्षण पात्र भी आ जाते हैं, जो न्यूटन की तरह पूछ बैठते हैं, "पेड़ से फल नीचे क्यों गिरा, ऊपर क्यों नहीं गया ?" दो और दो चार ही क्यों होता है, पाँच कैसे नहीं हो सकता ?····" पात्र अपनी इच्छा से क्यों न जिये और मरे, डाइरेक्टर के कहने पर, उसके इशारे पर····,कठपुतली की तरह क्यों अपने जीवन को, उसकी स्वतन्त्रता को संकुचित एवं सीमित कर दे ?····

नाटक की नायिका से अकेला नायक ही क्यों प्रेम करे ? दूसरे पात्रों को भी उससे रोमांस करने में पाबन्दी क्यों लगायी जाय !····नायिका नायक के पीछे ही क्यों अपनी जान गँवाये। अगर 'विलेन' से वह प्रेम करना

चाहे तो डाइरेक्टर को क्या अधिकार कि उसे आज्ञा न दे ?····नायक के हाथों ही हमेशा विलेन क्यों मारा जाये ? 'विलेन' क्यों नहीं 'नायक' को मारकर नायिका को ले भागे, ?····

इस प्रकार के अजीबोगरीब विचार शेखर के मस्तिष्क को मथते । वह समाज को व्यक्ति का निर्देशक (डायरेक्टर) एवं उसकी स्वतन्त्रता का नियामक अथवा नियन्त्रक मानने को कदापि तैयार नहीं था । प्रेमी हिन्दू है, इसलिए प्रेमिका मुसलमान नहीं हो सकती, लड़की बङ्गाली है, इसलिए पंजाबी की दुल्हन नहीं बन सकती, लड़का मद्रासी है, इसलिए सिन्धी बहू नहीं हो सकती····यह सारे सामाजिक बन्धन एवं विचार उसे हास्यास्पद लगते थे ।

अगर सोलह साल की लड़की से चालीस-पचास बरस का अधेड़ पुरुष विवाह कर सकता है, तो फिर चालीस-पचास की बुढ़िया को सोलह-सत्रह बरस के तरुण से विवाह करने में क्यों रोक लगायी जाय ?····

शेखर के विचार बहुत क्रान्तिकारी व 'शॉक' पैदा करनेवाले थे । वह हर पुरानी रूढ़ि पर तीखा प्रहार करना चाहता था । उसे प्रगतिशील कहलाने का भी लोभ न था । वह चाहता था, भारत में भी वैचारिक क्रान्ति होनी चाहिए । परिवार और समाज के प्रति जब तक लोगों में नयी चेतना नहीं पैदा होगी, राष्ट्र आगे नहीं बढ़ेगा । राष्ट्रीय जीवन में तभी उथल-पुथल मचेगी, जब पुराने साँचे टूटेंगे । पुरानी ह्रासोन्मुखी सामन्ती नैतिकता का गला घोंटना ही होगा ।

× × ×

शेखर को छबि से मिले बहुत दिन हो गये थे । कल ही वह बाहर 'टूर' समाप्त कर दिल्ली लौटा था । उसने फोन किया ।

"हैलो !"

"छवि विश्वास !"

"मैं शेखर हूँ !"

"आप जिन्दा हैं ?"

"आपने क्या समझा था, मेरा पासपोर्ट बन गया ?"

"शेखर, ऐसे कब तक चलेगा ? तुम कब 'सीरियस होंगे ? तुम बाहर जाते हो, तो मुझे बता जाने में कोई नुकसान होता है ! तुम्हें मुझे तंग कर क्या मिलता है !" छवि का गला भर आया।

"अभी से इतनी फ़िक्र करोगी, तो आगे कैसे चलेगा ?

"अच्छा, कब फुर्सत होगी ?"

"शाम चार बजे घर पर मिलो। मैं दीदी के घर पर हूँ। दीदी भी तुमसे मिलना चाहती हैं।"

"कहीं पिटवाने का इरादा तो नहीं है ?"

छवि हँस पड़ीं।

"अच्छा, तो तुमने दीदी से सब बता दिया है।"

"वे डाक्टर हैं, रोगी को देखकर उन्हें 'डायगनोस' करने में विलम्ब नहीं लगता।"

"मगर वे हार्ट-स्पेशलिस्ट कब से बनीं ?

"तुम क्या समझते हो ? दीदी, इङ्गलैण्ड रिटर्न हैं···!" छवि ने गर्वीले शब्दों में कहा।

"तब न जाने कितने 'बेचारों' के हार्ट उन्होंने छूरी से चीर दिये होंगे ?" शेखर ने मजाक किया।

"अपने हार्ट का इन्श्योरेंस कराके आना ? कहीं 'ऑपरेशन' से 'सिंक' न कर जाय।"

"मैडम, अपने 'हार्ट' की चिन्ता करो। यहाँ तो 'स्टेनलेस स्टील' का बना हार्ट है, तुम्हारी दीदी के बस की बात नहीं कि उस पर 'छूरी' चलाए।···मुझे देखते ही गश न खा जायँ ?"

"क्या कहने है ? अपने मुँह मियाँ मिट्ठू मत बनो। बहुत सुन्दर हो न ! तुम बेकार अपने को 'ओवर इस्टीमेट' करते हो !"

"तुम्हारी दीदी मुझसे क्या बात करना चाहती हैं ? कोई खतरेवाली बात तो नही है···?"

"डर गये !"

"हर नयी लड़की से मिलते मन डरता है।"

"दीदी लड़की नहीं, डाक्टर हैं।"

"डाक्टर नहीं, लेडी डाक्टर हैं। 'मिस' कितनी ही बड़ी डाक्टर क्यों न बन जाय, वह हमेशा किसी ऐसे डबल एस की तलाश में रहती हैं, जिसका एक 'एस' चुराकर अपने नाम के साथ जोड़कर, 'मिसेज' बन जाय।..."

"तुम्हारा मतलब 'ए...डबल एस' से है क्या ?"

"क्यों बेकार मेरी तारीफ कर रही हो ?"

"छवि इस मजाक पर खिलखिला उठी। शेखर ने शाम चार बजे पहुँचने का वादा किया और फोन रख दिया।

शाम को शेखर सज-सँवरकर समय से डॉ० अनुराधा विश्वास के बंगले पर पहुँच गया। दोनों बहनें स्वागतार्थ बरामदे में बैठी थीं। औपचारिक परिचय के बाद सब ड्राइङ्ग रूम में आकर बैठे। बात कहाँ से शुरू हो ? छवि छुई-मुई हो रही थी। शेखर को बोलने से अधिक निरीक्षण ही भला लग रहा था। छवि से ज्यादा गोरी-चिट्टी उसकी बड़ी बहन थी। शायद इंगलैण्ड के जलवायु का असर त्वचा पर पड़ गया हो।....मगर देखने में भी शारीरिक गठन की दृष्टि से वह छवि की छोटी बहन जैसी प्रतीत होती थी।

कौन कह सकता है, यह इङ्गलैण्ड रिटर्न लेडी डाक्टर हैं ? न आँखों पर मोटे फ्रेम का चश्मा, न मोटी नाक, न भारी डील-डौल। ज्यादा-से-ज्यादा 'नर्स' माना जा सकता है। किसने इसे डाक्टरी का सर्टिफिकेट दिया ? वह सोच रहा था। अनुराधा ने मौन तोड़ा, "तो आप ही हैं शेखर ?"

शेखर मुस्कराया, "आप किस शेखर की बात कर रही हैं ?"

छवि खिलखिला उठी।

"आप मज़ाक कर लेते हैं ?" अनुराधा झेंपती-सी बोली।

"लेडी डाक्टर से मजाक कर, कौन पुरुष अपने लिए खतरा मोल लेगा ?"

अनुराधा ने टोका, "मैं इस वक्त लेडी-डाक्टर नहीं, सिर्फ अनुराधा हूँ। इसलिए आप खतरे से मत घबड़ाइए !"

छवि ने बातों का रुख मोड़ने के लिए कहा, "दीदी, चाय ठण्डी हो जाएगी !"

सब डाईनिंग मेज पर पहुँचे। वहाँ छोटी-सी प्रदर्शनी लगी थी।

"इसीलिए देश में अकाल पड़ता है।" शेखर प्लेटों को गिनता बोला, "आपने क्या समझा था, पंजाबी हूँ तो पेटू भी होऊँगा।··· दिल्ली में सरकारी दावतों में, छोटी पार्टियों में, होटलों में कितना खाना बरबाद होता है ! मुझे लग रहा है, जैसे मुझे एक ही टेबुल पर ब्रेक-फास्ट, लञ्च, इवनिंग टी और डिनर, सभी एक साथ 'सर्व' कर दिया गया है। इसके लिए तो मुझे चौबीस घण्टे इसी टेबुल पर बैठकर तपस्या करनी पड़ेगी !"

उसकी बात की गम्भीरता को हँसी में टालते हुए अनुराधा बोली, "बेशक, आप बहुत दिलचस्प आदमी हैं ?"

मुँह में रसगुल्ला रखते हुए शेखर बोला, "मुझे बंग महिला से ज्यादा मीठी बंगला भाषा लगती है और उससे भी ज्यादा 'स्वीट' यह रसगुल्ला लगता है।"

अनुराधा न जाने क्यों मन में कुछ कमजोरी महसूस कर रही थी। उसे अन्दर कुछ टूटता-सा लग रहा था। शेखर में कुछ ऐसा था, जो उसे अपनी ओर बरबस खींच रहा था। ऐसे मस्त, बेफिक्र और हाजिरजबाब व्यक्ति से मिलकर, उसके मन की सूखती बगिया में ठंढी फुहार-सी पड़ने लगी।

मगर, उसने तो छवि को वचन दिया है। क्या यह छोटी बहन के साथ विश्वासघात नहीं ?···

छवि ने टोका, "दीदी, इंगलैण्ड के कुछ लतीफे और किस्से सुनाओ !"

शेखर ने भी चाय की चुस्की लेते हामी भरी।

अनुराधा ने सुनाया, "इंगलैण्ड में एक वृद्ध महिला के घर मैं बतौर पेइङ्ग-गेस्ट रहती थी। उसकी छोटी अधेड़ बहन विधवा थी। उसकी एक लड़की भी थी। उसके घर एक फ्रेञ्च युवक, 'पेइङ्ग-गेस्ट' की तरह रहता था। वह उस विधवा की पुत्री से प्रेम करता था। मगर उसकी माँ के डर से वह सदा सहमा-सहमा रहता। पुत्री को प्राप्त करने के लिए वह माँ को सदैव उपहार दिया करता। वह उसे सदा प्रसन्न रखना चाहता। मगर उस विधवा ने इसका कुछ

और ही मतलब निकाला। उसके अन्दर प्रेम के अंकुर पुनः फूट पड़े। उस युवक से वह बहुत ज्यादा प्यार करने लगी। युवक परेशान था। माँ-बेटी में किसे वह अपनाये ?···माँ प्यार में पागल-जैसी हो गयी। उसने मार्ग का काँटा दूर करने के लिए पुत्री को विष देकर मार डाला। मगर युवक घबड़ाकर घर छोड़-कर ही भाग गया। बाद में शायद बूढ़ी ने भी आत्महत्या कर ली।"

छवि को यह लघु-कथा पसन्द नहीं आयी। बोलीं, "दीदी, तुम यह कहानी मुझे आज शायद ग्यारहवीं बार पुनः सुनाकर 'बोर' कर रही हो।"

अनुराधा को छवि की यह स्पष्टोक्ति, जरूरत से ज्यादा कटु एवं कष्टकर प्रतीत हुई। उसका चेहरा उतर गया।

शेखर ने बात बदली, "मेरा दोस्त रमेश शायद ठीक ही कहता है, हम भले ही उनकी सभ्यता और संस्कृति की भोंडी नकल कर प्रसन्न हों, मगर यह मानना पड़ेगा कि उस जीवन में मानसिक शान्ति नाम-मात्र को नहीं मिलती। एक भाग-दौड़, बेचैनी और कुण्ठा का अटूट क्रम, कोई स्पष्ट आदर्श नहीं, कोई निश्चित लक्ष्य नहीं···सिर्फ एक कुहासा है!"

डा० अनुराधा को शेखर के विचार अच्छे लगे। छवि बोली, "क्या साधु बनने का इरादा कर लिया है ?···मानसिक शान्ति तो हिमालय की गोद में मिलेगी।"

अनुराधा को एक 'सेमिनार' में बोलने जाना था। उसने शेखर को आमन्त्रित करते हुए कहा, "हमारे यहाँ आजकल 'परिवार-नियोजन' सप्ताह मनाया जा रहा है। प्रदर्शनी भी लगी है। आज सेमिनार में मुझे बोलना भी है।"

आपका तो परिवार ही नहीं है, फिर आप 'परिवार-नियोजन' का उपदेश दूसरों को कैसे दे सकती हैं ?"

"जिस डाक्टर को बच्चा ही नहीं हुआ—वह भला दूसरों के बच्चे कैसे पैदा करा सकता है···आपका तर्क शायद कुछ ऐसा ही लगता है। अनुराधा ने उत्तर दिया।

"जिसके पास मोटर नहीं है, वह 'पद-यात्रा' के लाभ पर उपदेश कर सकता है, मगर जो मोटर पर हमेशा चढ़ा घूमता है, उसे 'पद-यात्रा' के लाभ बताने का कोई नैतिक आधार नहीं हो सकता!" शेखर बोला!

"अगर आपका तर्क ठीक मान लूँ, तो पहले मुझे विवाह करना होगा, तब स्वयं 'परिवार-नियोजन' पर बोलने का नैतिक अधिकार प्राप्त करना होगा ?.... मगर वहाँ लोग मेरा इन्तजार कर रहे होंगे। आधे घंटे में मेरे लिए 'उपयुक्त वर' ढ़ूँढ़ना, फिर विवाह रचाना तथा 'परिवार-नियोजन' के लिए पति को राजी कर लेना, संभव नहीं प्रतीत होता !.... इसलिए इस वक्त आपसे आज्ञा और क्षमा चाहूँगी.... !" अनुराधा ने उठते हुए कहा।

शेखर व्यंग्य से झेंप गया। छवि को प्रसन्नता हुई। चलो, जल्दी ही दीदी से छुटकारा मिला। उसने सोफे पर शेखर के पास बैठते पूछा, "कहो, दीदी पसन्द आयी !"

"तुमसे कुछ ज्यादा सुन्दर है। कमसिन भी लगती हैं !...."

छवि को ये शब्द बर्छी की तरह छेद गये। बोली, "तुम लोगों की यह खास आदत है। हर नयी लड़की, तुम्हें ज्यादा सुन्दर और कमसिन दीखती है।.... जाति का असर है !"

छवि का पारा तेज हो गया।

शेखर ने उसके हाथ को पकड़ लिया और कहा—"और तुम भी नारी जाति का अपवाद थोड़े ही हो ! दूसरी लड़की की प्रशंसा सुन कैसे सकती हो ?.... जल गयी !"

छवि ने हाथ छुड़ाया ! उसकी आँखों में जल भर आया। बोली, "तुम सब रूप के लोभी हो। मैं काली हूँ, इसलिए कैसे पसन्द आ सकती हूँ। कितनी बार तुम मुझे रंग का ताना दे चुके हो।.... ऐसी ही खराब लगती हूँ, तो मुझे छोड़ दो। अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है।.... मैं तुम्हारी कोई मंगेतर थोड़े ही हूँ, फिर डरते क्या हो ! तलाक के लिए तुम्हें किसी अदालत का दरवाजा नहीं खटखटाना पड़ेगा।....तुम सुन्दर हो, तुम्हें एक दीदी क्या.... कई और भी मिल जाएँगी ! लेकिन तुम क्यों किसी से शादी करने लगे ?—तुम्हारा स्वार्थ ऐसे ही पूरा हो जाता है। तुम बहेलिया हो, तुम्हारा काम 'रोज नया शिकार जाल में फँसाना है।"

छवि के अन्दर कुछ उबल उठा। वह कहनी-अनकहनी सब ईमानदारी से कह गयी। फिर फफककर रो पड़ी। शेखर को 'शक' लगा। उसने रूमाल से उसके आँसू पोंछते हुए कहा, "तुम सचमुच एकदम नादान बच्ची हो। मेरी बात का इतना बुरा मान गयी। अरे भई, मैंने तो मजाक किया था।"

मगर छवि के आँसू थे, जो थमते ही न थे। दोनों आँखों से सावन-भादों झर रहे थे।

शेखर कुछ देर हतप्रभ-सा वहाँ उदास बैठा रहा। फिर चुपचाप भारी कदमों से उठा और बाहर चला गया।

● ● ●

७

प्रातः रमेश उठा, तो उसे ज्वर हो आया। उसका सिर दर्द से फटा जा रहा था। उसे लगा, जैसे रात उसने कोई बुरा सपना देखा हो, ऐसा सपना, जिसने उसके अस्तित्व को ही कँपा दिया।

रोजी ! एक खूबसूरत जहरीली नागिन। शेखर, एक अविश्वसनीय मित्र ! जरूर दोनों ने उसके विरुद्ध एक घृणित षड़यन्त्र रचा था। कभी प्रतिशोध का विचार उठता, मगर फिर सोचता, उनके पापों का फल भगवान ही उन्हें देगा। शेखर जो रूप के बाजार में लोभी, रस-लोलुप भँवरा बना घूमता है, किसी दिन अपनी ही मूर्खता के जाल में उलझकर स्वतन्त्रता खो बैठेगा। रूपगर्विता रोजी, जरूर कभी ऐसे दलदल में जा गिरेगी, जहाँ से उसका उद्धार सम्भव नहीं।

रमेश के जीवन में एक बार और ऐसा ही दुःखद और कड़ुआ प्रसंग उपस्थित हुआ था। उन दिनों वह कॉलेज में पढ़ता था। लाइब्रेरी से वह कुछ विदेशी सेक्सी उपन्यास ले आया। उपन्यास समाप्त करते-करते, उसने अनुभव किया—नारी एक रहस्य है। उसे जानना होगा। शाब्दिक चित्रों से उसकी भूख जागी। वह नारी को पास से छूना और महसूस करना चाहता था। 'नाना' के लेखक एकिल जोला ने नग्न नारी का जो वर्णन किया, वह इतना उत्तेजक और मादक था कि वह मानसिक सन्तुलन खो बैठा।

कभी वह प्लान बनाता, किसी सहपाठिनी को प्रेम के फन्दे में फंसाकर, किसी एकान्त होटल के कमरे में ले जाए और उसे निरवस्त्र करके देखे। मगर कौन छात्रा उसकी सौन्दर्योपासना के लिए अपनी लज्जा का आवरण सहर्ष त्यागने को प्रस्तुत होगी? जोर-जबरदस्ती करने में कानून और सामाजिक लांछन का भय था।

डरते-डरते एक शाम वह बदनाम गली की ओर चल पड़ा। प्रयाग में कटरा मोहल्ले के इर्द-गिर्द वेश्याओं की बस्ती सुन रखी थी। वह वहाँ काँपते कदमों से पहुँचा।

छोटी-बड़ी दुकानें सजी थी। फूलों के गजरे और पान के चौघड़े बिक रहे थे। उसने तमोली से पान लिया। सहमते हुए गली में प्रवेश किया। तभी एक छोकरा पीछे लग गया।

"बाबूजी, माल चाहिए''' मेरे साथ आइए। एक से एक फस्ट-क्लास चीज है, देखते ही तबीयत फड़क जाएगी। हर उम्र और हर जात की छोकरी मिलेगी। पसन्द आये तो रुकना, नहीं तो दूसरे अड्डे पर ले चलूँगा।"

रमेश को गाइड-छोकरा देखकर अचम्भा हुआ। मगर उसने उसका विरोध नहीं किया। चुपचाप उसके पीछे चलने लगा। कई अँधेरी और तंग गलियों का चक्कर देता वह आगे बढ़ने लगा। गलियों की इस भूल-भुलैया में वह चकरा गया। वह अकेले वापस कैसे लौटेगा? शंका से मन काँपा? कहीं किसी बदमाश गैंग का तो नहीं है? एकान्त में रुपया-पैसा और घड़ी-अँगूठी सब छूरे की नोक पर न छीन ले!!

वह एक क्षण को ठिठका । छोकरे ने साहस दिलाया, "डरो मत साब", हम चोर उचक्के नहीं हैं । हम मेहनत कर पैसा लेते हैं, हराम का माल नहीं लूटते । ····आजकल पुलिस बहुत तंग करती है, इसलिए इतना छिपकर गलियों के अन्दर रहना पड़ता है ।"

अड्डा आया । दरवाजे पर दस्तक दी । एक बूढ़ी औरत ने दरवाजा खोला । छोकरा कुछ फुसफुसाया । उसने रमेश को देखा, नज़रों से तौला ।

रमेश डरता अन्दर गया । छोकरे ने पर्दा हटाया । सजा हुआ कमरा था । रमेश कुर्सी पर बैठ गया । उसने सिगरेट पेश की । रमेश ने इन्कार कर दिया ।

छोकरा बाहर चला गया । रमेश के कानों में फुसफुसाहट पड़ी—'बड़ा साव हैं, नया पंछी है । फिफ्टी····फिफ्टी !"

पाँच मिनट बाद तीन-चार लड़कियों ने एक साथ कमरे में प्रवेश किया । रमेश बुरी तरह नर्वस हो गया । सब मुस्कराती हुई सामने खड़ी हो गयीं । रमेश को पाउडर और रूज़ से लिपे-पुते चेहरे बड़े बनावटी लगे । उसे लगा—लोलिता, नाना और मादाम बावेरी ही नये नकली चेहरे लगाकर सामने आ खड़ी हुई हैं । वह किसे पसन्द करे ? उसने एक सबसे कम उम्र की दीखनेवाली, गोरी लड़की की ओर इंगित किया । बाकी लड़कियाँ कमरे से बाहर चली गयीं । छोकरे ने बताया, "पच्चीस रुपया पेशगी दे दीजिए····।"

रमेश ने व्यावसायिक दृष्टि से मोल किया, "दस रुपये हैं !"

"अरे बाबू, दस रुपये में ऐसी 'चीड़ा' कहाँ मिलेगी ?····चलिये, पन्द्रह दे दीजिए !"

रमेश ने दस रुपए का नोट सामने रख दिया । छोकरे ने अपना कमीशन माँगा । उसे भी दो रुपये देकर विदा किया । छोकरा बाहर निकल गया । उसके निकलते ही लड़की ने कमरा अन्दर से बन्द कर लिया । फिर वह पलंग पर बैठ गयी । रमेश का गला सूख रहा था ।

"क्या नाम है ?"

"नूरजहाँ !"

"कब से यह काम कर रही हो ?"

"तुमसे क्या ? अपना काम करो और घर जाओ !" उसने टका-सा जवाब दिया ।

रमेश को शॉक लगा । लड़की ने अपनी साड़ी उतार दी और पलंग पर लेट गयी । रमेश को कँपकँपी हो आयी । रोज इसके साथ, इसी पलंग पर कितने लेटते होंगे । वह उसी प्रकार बैठा रहा ।

नूरजहाँ ने टोका, "जल्दी करो ! दूर क्यों बैठे हो ?"

"मैं तुम्हें छूना नहीं चाहता, सिर्फ देखना चाहता हूँ !"

वह उठ बैठी । रमेश ने साहस किया । बोला, "सारे कपड़े उतार दो !"

"इसके दस रुपये और लगेंगे !"

हारे जुआड़ी की तरह उसने दस का नोट आगे बढ़ाया ।

नूरजहाँ ने सारे कपड़े उतार दिये उसकी पसली की हड्डियों को देखकर रमेश को दया आयी । एक बीमार, कमजोर नारी-शरीर ! फिर भी वह अपनी जगह से नहीं हिला ।

नूरजहाँ ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, "एक मारवाड़ी सेठ भी, तुम्हारी तरह रोज रात आता है । सारे कपड़े उतारकर गोद में बिठाता है । फिर ढेर सारे रुपये देकर चला जाता है । शरीफ आदमी है । शायद किसी लायक नहीं है, ऐसे ही हविश मिटाता है !…"

रमेश का पौरुष जागा । उसने आवेग में भरकर उसे बाँहों में भींच लिया । उसके अन्दर कुछ उफान उठा ! मगर, उसने अपने को सम्हाल लिया ।

"जल्दी से कपड़े पहनों, मैं बाहर जाऊँगा । मेरा दम घुट रहा है !…"

नूरजहाँ कपड़े पहनती हुई बोली, "तुम्हें मैं पसन्द नहीं आयी ?"

रमेश ने उसके प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया । उसका मन घृणा से मिचला उठा ।

बाहर निकलते हुए उसने पीछे लगते ठहांके सुने ।…वह तेज़ कदमों से चल पड़ा । जल्दी-से-जल्दी वह उस अँधेरी गली से शीघ्रातिशीघ्र हमेशा के लिए बाहर निकल जाना चाहता था ।

नारी के इस घिनौने रूप ने उसके विश्वासों की जड़ हिला दी।···उसे घृणा हो आयी—अपने-आप से, अपने पतन से! उसने अनुभव किया, एक अश्लील पुस्तक, बुरे दोस्त से भी ज्यादा खतरनाक होती है।

और, आज जीवन में दूसरी बार उसने नारी का दूसरा घिनौना रूप देखा। उसका मन वितृष्णा और क्रोध से भर उठा। पत्नी और बच्चे याद आये। उसे लगा, सच्चा सुख परिवार में है, पत्नी की निःस्वार्थ बाँहों में है। शिशुओं की भोली, मासूम आँखों में है, परिवार की शान्ति में है!! जो क्लबों, होटलों और वेश्यालयों में सुख की तलाश में भटकते हैं, वे सचमुच दया के पात्र हैं।···

रमेश का मन दिल्ली से भी उचाट हो गया। काम खत्म हो चुका था। उसने हरारत में ही दिल्ली छोड़ने का अन्तिम फैसला कर लिया। सामान बाँधा और स्टेशन चल दिया।

× × ×

इलाहाबाद पहुँचकर, रमेश ने शेखर को एक पत्र लिखा। उसी लिफाफे में एक पत्र रोज़ी के भी रख दिया। शेखर के नाम पत्र इस प्रकार था—

"प्रिय शेखर,

इस बार दिल्ली में तुम्हारे द्वारा दिये गये सम्मान और किये ग़ये सत्कार के प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

तुमने मुझे एक ऐसी दुनिया को निकट से देखने और पहचानने का अवसर दिया, जहाँ तक मेरी पहुँच नहीं थी। इस यात्रा से मैंने 'ऐसा' बहुत कुछ प्राप्त किया है, जो इतनी उच्च शिक्षा से भी प्राप्त न कर सका था।

मैं समझता हूँ, तुम अपने साथ एक खतरनाक प्रयोग कर रहे हो। मुझे डर है, कहीं तुम अपना सर्वनाश न कर बैठो।

····तुम्हारे पास रूप है, जवानी है और पैसा है। तुम किसी भी लड़की को सहज आकर्षित कर सकते हो। शिक्षित होने के नाते उसे अपने शब्द-जाल से भ्रमित कर सकते हो।

मगर मेरे दोस्त ! जीवन बहुत छोटा होता है । उसे अगर ऐसे खतरनाक प्रयोगों में ही उलझा दोगे, तो मंजिल तक कैसे पहुँच पाओगे ? क्या जीवन और यौवन का उदेद्श्य, स्वच्छन्द भोग-विलास ही है ?

तुम यह क्यों भूल जाते हो तुम्हारी माँ ही नहीं, एक छोटी बहन भी है । तुम्हारा धर्म और ईश्वर पर भले ही विश्वास न हो, नैतिकता और अनैतिकता के बन्धनों से अपनी जीवन-डोर नहीं उलझाना चाहो, तो कोई बात नहीं, मगर इससे तो सहमत होगे कि जो तुम्हारे लिए उचित है, वह दूसरे के लिए भी उचित नहीं होगा । अगर तुम किसी दूसरे भाई की बहन से जी बहलाना अनुचित न समझो, उसके शरीर को भोगकर भी उसे जीवन-संगिनी का पद न देना चाहो और एक साथ एक से अधिक सुन्दरियों से रोमांस करने में आनन्द समझो, तो फिर तुम्हें इस बात का कोई नैतिक अधिकार नहीं कि तुम अपनी बहन की स्वतन्त्रता पर पहरा दो ।

शायद लौकिक धर्म में भी तुम्हारा विश्वास नहीं । तुम छवि, नसीम और रोजी को एक ही हाँड़-माँस का बना समझते हो, इसीलिए तुम्हें इसका संकोच नहीं, एक हिन्दू है, दूसरी मुसलमान और तीसरी ईसाई ! राष्ट्रीयता के इस विराट दृष्टिकोण के लिए तुम वन्दनीय हो ! तुम महान् हो । मगर तुम्हारी इस राष्ट्रीयता और धार्मिक सहिष्णुता की नींव स्वार्थ पर रखी हुई है । यह एक खोखली इमारत है ।

तुम्हारी बहन अगर किसी सुलेमान से निकाह कर ले तो तुम्हें कैसा लगेगा ? तुम्हारी बहन किसी जात के साथ लव-मैरेज कर ले, तो तुम क्या उसे सच्चे मन से आशीर्वाद दे सकोगे ! और अगर तुम्हें पता चले, उसके प्रेमी अकेले जॉन, सुलेमान और सतीश ही नहीं···और भी कई रंगीले नवयुवक हैं जिनके साथ में वह क्लबों में नाचती और तुम्हारी आँख में धूल झोंककर कॉलेज का बहाना कर होटलों के एकान्त कमरों में काम-केलि में रत रहती है···तो सच बताना दोस्त, तुम्हारी प्रतिक्रिया क्या होगी ?···

तुम्हारी बहन, मेरी भी छोटी बहन है । मैं जानता हूँ, उसका चरित्र निष्क-लंक है । मैं उसका अपमान करने को यह सब नहीं लिख रहा हूँ । मैं तो तुम्हें

सिर्फ यह अनुभव कराना चाहता हूँ कि तुम जिन 'आदर्शों के पुजारी बने, स्वेच्छाचारी जीवन का स्वच्छन्द उपयोग कर रहे हो, वह किसी भी सभ्य समाज के लिए उचित नहीं कहा जा सकता। अगर तुम सारे सुखों की परिभाषा अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की दृष्टि से करना चाहो, तो कोई बात नहीं ! मगर इसे मत भूलना 'सुख' की जीवन में किसे चाह नहीं होती। तुम **अपनी** जवान प्रेमिकाओं के स्वर-में-स्वर मिलाकर 'नारी-स्वतन्त्रता' की वकालत भी करते हो, फिर अपनी बहन को भी क्यों नहीं खुली स्वतन्त्रता दे देते ?···विवाह पर तुम्हारा विश्वास नहीं, सामाजिक सदाचार को तुम मानना नहीं चाहते, पुरानी रूढ़ि और परम्पराओं को तुम ध्वस्त करना चाहते हो। तुम्हारे विचार बड़े ऊँचे और तुम्हारी कल्पनाएँ महती हैं ···।

मगर, तुम इसे जब अपने दृष्टिकोण से सोचते हो, तभी तक यह 'आदर्श' प्रतीत होता है। जरा अपने मन को टटोलो और ईमानदारी से स्वयं से प्रश्न करो···क्या जिस स्वतन्त्रता के तुम पुजारी हो, जिस नये राह पर तुम स्वयं चलना चाहते हो, उसे अपनी बहन के लिए भी उचित समझते हो ?···

'प्रयोग' के नाम पर तुम अपने लिए नयी राह बनाना चाहो, तो आपत्ति नहीं। मगर ऐसी 'राह' को बनाने में जीवन क्यों नष्ट किया जाए, जिसकी कोई मंजिल ही न हो !

मेरी बात का बुरा न मानना। इस पत्र को अगर निरर्थक समझो तो फाड़कर रद्दी की टोकरी में डाल देना।

माँ को प्रणाम और बहन को प्यार।

तुम्हारा ही—
रमेश !

पुनश्च:—इसके साथ का पत्र रोजी को दे देना, अगर उचित समझो !"

× × ×

उसने जो पत्र रोजी के नाम भेजा था, वह इस प्रकार था—

मिस रोजी,

तुम्हें यह पत्र पाकर शायद विचित्र लगे। मेरा-तुम्हारा कुछ ही घंटों का परिचय और चन्द मिनटों का ही साथ था। तुम्हारे इर्द-गिर्द सदैव प्रशंसकों की

भीड़ लगी रहती है। हो सकता है, उस भीड़ में तुम्हें इस पत्र लेखक का चेहरा याद भी न आये ! मगर फिर भी मैं तुम्हें पत्र लिखने की धृष्टता कर रहा हूँ···

मैं तुम्हारा आभारी हूँ, तुमने मुझे अँधेरे व उजाले में भेद करना सिखाया। तुम्हारी चकाचौंध में मेरी पत्नी का चेहरा बहुत धुँधला पड़ गया था, बच्चे और परिवार बहुत पीछे छूट गये थे। मुझे लगा—जिन्दगी बहुत कड़ुवी और अवास्तविक है, हम बेकार यथार्थ से ही चिपके रहकर बहुमूल्य जीवन की थाती को नष्ट करते हैं।···सचाई तो सपनों में होती है, जिन्दगी तो सुरा और सुन्दरी में ही महकती है···और तुम्हारी बाँहों में एक क्षण के लिए मुझे 'जीवन का काल्पनिक स्वर्ग' प्राप्त हो गया।···

मैंने अनुभव किया, बेकार लोग परिवार का बोझ उठाकर, जिन्दगी को लंगड़ी बनाते हैं। पाप-पुण्य, नैतिकता-अनैतिकता और धर्म-अधर्म के गीत गाते हैं। जिन्दगी बड़ी छोटी होती है, मगर बहुत कीमती होती है। उसे हम परिवार के घेरे में बाँधे रखकर स्वयं नष्ट करते हैं। शेखर ठीक ही कहता है, खाओ, पियो मौज करो !····

····मुझे तुम्हारी रसभरी आँखों में, जीवन का सत्य तैरता मिला। तुम्हारे मेघ-से उफनते वक्ष-स्थल में स्वर्ग के सारे सुख बँधे दिखायी पड़े और रेशमी बाँहों के बन्धन में जीवन के सारे सुखों की कुंजी प्राप्त हो गयी। मैं अपना 'अतीत' भूल गया, वर्तमान याद न रहा और भविष्य की चिन्ता से मुक्त हो गया।···· इच्छा हुई, बैण्ड इसी प्रकार बजता रहे, मैं तुम्हारी बाँहों में थिरकता रहूँ और वह रात कभी न समाप्त हो !!····

मगर यह नशा कुछ ही पलों का था।

तुमने मेरी कड़ुआहट कम करने को मुझे जबरदस्ती शराब पिलायी। मैं दवा की तरह उसे पी भी गया। मैं तुम्हारा एहसानमन्द हूँ कि तुमने मुझे ज्यादा शराब पिलाकर, बेहोश होने से बचा लिया।····तुम्हारा हाथ शेखर के हाथ में देखकर, मुझे लगा, मेरा स्वर्ग मुझसे छिन गया। कल्पना का रंगीन शीशमहल टूट गया। सपनों के पंख झुलस गये।····मैं यथार्थ के धरातल पर वापस लौट आया। ····अगर तुमने 'दवा' की तरह, मेरा नशा बनाये रखने के लिए, मुझे

शराब न पिलायी होती, तो शायद मैं उस दिन न जाने क्या कर गुजरता। तुमने मुझे गिरने से बचा लिया। मैं आजीवन तुम्हारा कृतज्ञ रहूँगा।

यह पत्र तुम्हें मैं मात्र धन्यवाद देने को ही नहीं लिख रहा हूँ। मैं तुमसे कुछ और भी कहना चाहता हूँ।

....मैं नहीं जानता, तुम ईसाई कैसे बनी? मैं ईसा का आदर करता हूँ। मगर तुम्हारा जन्म भारत में ही हुआ। तुम इसी देश की कन्या हो। धर्म-परिवर्तन से ही तुम परायी नहीं बन गयी। फिर तुम मूलतः एक नारी हो। नारी, जो पवित्रता की उज्ज्वजल प्रतिमा होती है, जैसे मरियम!

...मैं तुम्हें धर्म या नैतिकता का कोरा उपदेश नहीं देना चाहता। मुझे इसका अधिकार भी नहीं है। सिर्फ एक बात जानना चाहूँगा।

तुम नारी हो, हो सकता है कभी तुम्हें मातृत्व का भी चाहे-अनचाहे गुरु भार उठाना पड़े। अगर तुम्हारी पुत्री हो और वह तुम्हारे ही समान स्वच्छन्द भोग और आनन्द के रास्ते पर चलना चाहे, तो तुम्हें कैसा लगेगा? क्या तुम उसे इतनी स्वतन्त्रता देना पसन्द करोगी?

फिलहाल बस इतना ही।

इस पत्र को लिखकर जो धृष्टता की, उसके लिए मुझे क्षमा करना।

जो तुम्हारा कुछ नहीं है—रमेश!

● ● ●

८

शेखर को छवि से ऐसे दुर्व्यवहार की स्वप्न में भी उम्मीद न थी। उसे क्रोध आया—आखिर वह अपने को समझती क्या है? रंग ही साँवला नहीं, दिल भी काला लगता है। अपनी बड़ी बहन की प्रशंसा सुनकर अचानक इतना भड़क उठी, जैसे छोटी पतीली में उबाल आ जाये और ढक्कन नीचे गिर पड़े।···मैं उसे और सताऊँगा। वह तिल-तिल कर जलेगी और मैं उसकी दीदी के साथ घूमूँगा!

अनुराधा भी शेखर के प्रति कम अनुरक्त न थी। धीरे-धीरे दोनों एक दूसरे से मिलने लगे। छवि अपने पिता के घर लौट चुकी थी। अब शेखर घण्टों अनुराधा के शयन-कक्ष में पड़ा रहता। अनुराधा को कुआँरापन अब बोझ लगता। वह जल्द-से-जल्द यह केचुल उतार फेंकना चाहती थी।

शेखर एक दिन पूछ ही बैठा, "अनुराधा, एक बात पूछूँ? झूठ तो नहीं बोलोगी?"

"नहीं!"

"तुमने किसी से प्रेम किया है?"

अनुराधा स्तब्ध! क्या उत्तर दे?

"डरो मत, मैं इसे अपने तक ही रखूँगा!" शेखर ने आश्वस्त किया।

"प्रेम से मुझे घृणा हो गयी थी। मैं इसे तुमसे मिलने से पूर्व तक 'लोभ' का दूसरा रूप मानती थी।···मेरे मेडिकल कॉलेज में एक प्रोफेसर थे, कुलकर्णी, साठ वर्षीय बूढ़े डाक्टर भी प्रेम के मरीज थे। सभी सुन्दर लड़कियों से प्रेम करते। मुझ पर भी उनकी विशेष कृपा थी। मगर मैंने भी उन्हें खूब उल्लू बनाया। डिवीजन बना चुके थे, मगर पक्षी हाथ नहीं लगा!

"मुझे भी कहीं उल्लू तो नहीं बना रही हो!"

"जो खुद उल्लू बन चुका है, वह दूसरे को कैसे उल्लू बना सकता है।

"इसका मतलब यह कि हम दोनों ही उल्लू हैं। शेखर ठहाका लगाता हुआ बोला।

एक दिन अनुराधा ने साहस किया, पूछा, "शेखर, शादी करोगे !"

"इतनी जल्दी !"

"डरती हूँ, तुम्हे गँवा न बैठूँ !"

इतना सुनते ही शेखर के सामने उदास छवि का मुखड़ा तैर गया। बोला, "मैंने कभी शादी के बारे में 'सीरियसली' सोचा भी नहीं।"

"सोच लो।" अनुराधा ने आग्रह किया।

"सोचने की फुर्सत कहाँ !···अच्छा देखूँगा !" कहकर शेखर ने वात टाल दी।

एक दिन घवड़ायी हुई अनुराधा का फोन आया, "नेफा से तार आया है। भैया बीमार हैं। मैं जाना चाहती थी, मगर आजकल दो-दो डाक्टर छुट्टी पर हैं। मुझे सिविल-सर्जन छुट्टी नहीं दे रहे हैं। छवि आज सुवह के 'प्लेन' से गौहाटी चली गयी !"

शेखर को लगा, वह फिर बाजी हार गया। छवि उससे बिना मिले ही चली गयी। क्या वह इतनी जल्दी उसे भूल गयी ? क्या छवि को पता चल गया कि वह अनुराधा में ज्यादा दिलचस्पी ले रहा है। या वह खुद जानबूझकर बड़ी बहन के रास्ते से हट गयी !····

शेखर कुछ निर्णय नहीं कर पा रहा था। उसे लगा, कुछ 'बहुमूल्य पूँजी' थी, जो आज उससे छिन गयी। उसने कुछ ऐसा गवाँ दिया है, जो फिर शायद कभी प्राप्त नहीं हो सकता। छवि का मिज़ाज थोड़ा गर्म था, उसे गुस्सा जल्दी आ जाता था, मगर उसने भी तो बदला लेने की जिद ठान ली थी।

आखिर वह उसकी थी भी कौन ? उस पर उसका अधिकार भी क्या था ?

शेखर को अपनी दुनिया घूमती हुई नज़र आती। शराब में नशा चुक गया था। सुन्दरियों के हाव-भाव, कटाक्ष सब उसे निरर्थक लगते। वह अनुभव करता, उसका जीवन ही निस्सार हो गया है। फिर कमजोर पड़ते विचारों को वह खुद

सहारा देता—हो सकता है, जल्दी में मिलने का अवकाश न मिला हो। वह उसे जरूर पत्र लिखेगी।"

मगर उसका पत्र नहीं आया।

अखबारों में उसने एक आस्ट्रेलियन युवक से रोजी की 'सिविल मैरेज' का समाचार पढ़ा। वह उसे बधाई देने जाता, मगर उसे फोन करने पर पता चला कि वह 'हनीमून' के लिए स्विटजरलैंड जा चुकी है।···

इसी बीच जले पर नमक पड़ा। रमेश का पत्र मिला। जल्दी-जल्दी वह सारा पत्र आँखों से चाट गया।······यह क्या ?

वह अपने को बहुत दुर्बल और अन्दर से टूटता-सा अनुभव करने लगा। उसे लगा, जिस धरती पर वह विश्वास के साथ खड़ा था। वह भीतर से खोखली है। जिन फूलों से वह प्यार कर रहा है, वे सब कागज के नकली फूल हैं। उसकी सुगन्ध भी कृत्रिम एवं क्षणिक है।

जिस पथ का वह गर्वीला पथिक बना ऐंठकर चल रहा था, वह अधूरा रास्ता था, जो एक भ्रम की झाड़ी के पास पहुँचकर समाप्त हो जाता है।

नयी राह की कल्पना करनेवाले बटोही को आज किसी घने पेड़ की छाँह भी न मिल रही थी, जिसके नीचे बैठकर वह अपनी असफलताओं का लेखा-जोखा कर सकता !······

नयी राह के निर्माण की कल्पना जितनी आकर्षक थी, उतनी ही निराशा आज शेखर को यह अनुभव कर हो रही थी, उसका सारा श्रम एवं समय व्यर्थ गया। राह बनाते वक्त उसने कभीं यह नहीं सोचा था कि बिना निश्चित मञ्जिल के राह कभी पूरी नहीं होती ! ऐसी 'राह' से क्या लाभ, जिसकी कोई सीमा न हो ?

रमेश के पत्र को उसने एक दो बार नहीं, अनेकों बार पढ़ा। कभी छवि का भोला मुखड़ा तो कभी छोटी बहन रागिनी का मासूम, निष्कपट एवं निष्कलङ्क चित्र लहर जाता···· !

रमेश ने ठीक ही लिखा है, जीवन का उद्देश्य स्वच्छन्द भोग-विलास ही नहीं होता !····उसे भी कुछ करना होगा, कुछ बनना होगा !

मगर क्या ?

इस प्रश्न का उसके पास कोई उत्तर न था ।

× × ×

शेखर की पदोन्नति हो गयी । उसे कम्पनी ने इङ्गलैण्ड के लिए अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया । 'एक्सपोर्ट सेल्स मैनेज़र' का नियुक्ति-पत्र प्राप्तकर उसकी आँखों में नया नशा आ गया। उसे लगा, उसकी जिन्दगी की असली महत्त्वाकांक्षा अब पूरी होगी । एक छवि क्या, परियों के उस रङ्गीन देश में उसे हजारों छवियाँ सहज ही प्राप्त होंगी ।

डॉ० अनुराधा उदास हो गयी । उसे लगा, जैसे मञ्जिल पास आकर फिर दूर चली गयी । फिर भी केवल शिष्टाचार के नाते, उसने शेखर को डिनर पर आमन्त्रित किया ।

उसके लिए वढ़िया इम्पोर्टेड ह्विस्की मँगायी । खुद दुल्हन की तरह अपना शृङ्गार किया ।

शेखर के लिए बोतल से ज्यादा अनुराधा में नशा था । उसने हाथ पकड़कर अनुराधा को अपनी बगल में सोफे पर बिठा लिया ।

"आज बिजली कहाँ गिरेगी ?"

"बिजली गिरानेवाले से यह प्रश्न करना अटपटा लगता है ।"

"तुम्हारा मतलब ?"

अनुराधा की कजरारी आँखों में पीड़ा का सागर उतरा आया । बोली, "तुम्हें क्या पता, किसी के स्वप्न-महल पर तुमने बिजली गिराकर उसे नेस्त-नाबूद कर दिया है ।"

शेखर ने दर्द की कड़ुआहट धोने के लिए, जल्दी से दो पेग चढ़ाये । आँखें गुलाबी हो उठीं । उसने अनुराधा की बाँहों को कन्धे से पकड़कर दबाते हुए कहा, "डार्लिंग, खुशी के मौके पर तुम यह कौन-सी दास्तान ले बैठी !....तुम मुझसे प्यार करती हो न ! फिर तुम्हें खुश होकर आज नाचना-गाना चाहिए ।"

एक पेग और चढ़ाकर बोला, "बचपन से मैं एक सपना देखता था । अब मेरा सपना पूरा होगा । डार्लिंग, कौन कहता है ज़न्नत ऊपर है ? मैं कहता हूँ,

जन्नत-स्वर्ग सब इस धरती पर है। अगर मैंने जन्नत के सारे सुख इस जीवन में नहीं भोग लिये, तो शायद मुझे फिर दूसरा जन्म लेना पड़े !"

"तुम सुख की तलाश में लन्दन जा रहे हो ?" अनुराधा ने पूछा।

"हाँ, डार्लिंग ! मैं जीवन से सुख की आखिरी बूँद निचोड़ लेना चाहता हूँ ?"

"सुख क्या है, यह भी जानते हो ?" अनुराधा ने प्रश्न किया।

"मैं हर चीज की परिभाषा में नहीं उलझना चाहता। जो वर्तमान है, सामने है, सहज प्राप्य है, वही सुख है।" शेखर बोला, "मेरी थाली में अगर आम पड़ा है, तो मुझे यह जानने की जरूरत नहीं, वह कहाँ का है ? बनारसी लँगड़ा है, या लखनऊ का दसहरी है या चौसा ? आम को आम के रूप में समझना और ग्रहण करना ही उचित है। इसी प्रकार सुख क्या है, यह परिभाषा जानने की कभी मैंने चेष्टा नहीं करी। जो मन के अनुकूल है, वही सुख है।"

"तो जो प्राप्य है, सम्मुख है····उसका तिरस्कार क्यों ? क्या वर्तमान की उपेक्षा एवं भविष्य की कल्पना में सुख का विश्वास करना उचित है ?"

"नहीं, राधा। इस वक्त तुम्हीं सत्य हो, तुम्हीं वर्तमान हो, तुम्हीं उपलब्ध हो····तुम्हारी बाँहों में ही मेरा सुख है।"

शेखर ने अनुराधा को बाँहों में कस लिया।

····अनु, नहीं राधा इस वक्त भूत-भविष्य की चिन्ता से मुक्त, वर्तमान से···· सुख की अन्तिम बूँद निचोड़ लेना चाहती थी।

× × ×

शेखर ने इङ्गलैण्ड जाने से पूर्व पिता को सूचित नहीं किया। वह चाहता था, अचानक इङ्गलैण्ड उनके कार्यालय में पहुँचकर उन्हे चौंका दे।

जाने की तैयारियों में व्यस्त शेखर, भारत के प्रति सतत निर्मम होता जा रहा था। उसे चारों ओर देश में कमियाँ ही दृष्टिगोचर हो रही थीं। भला यह भी कोई देश है। गरीब-गँवार, रूढ़िवादी। बड़े-से-बड़े परिवार में भी स्त्री क़ैद है····सोने के पिंजरे में। अगर किसी ने भूल से तलाक ले लिया, तो उस स्त्री से पुरुष-वर्ग ही नहीं, स्वयं स्त्री-समाज घृणा करने लगता है। अगर किसी लड़की

का कोई ब्वॉय फ्रेण्ड हो, तो सारा समाज उसे शङ्का की दृष्टि से देखने लगता है। सीता-सावित्री के देश में, औरत छुई-मुई बनकर रह गयी हैं। जरा-सा हाथ लगा और मुरझा गयी। यह भी कोई जिन्दगी है !···

आखिर सत्रह तारीख को शेखर के वायुयान ने भारत की मिट्टी भी छोड़ दी। धरती से ऊपर उठते हुए, शेखर को अनुराधा की गीली आँखें और माँ की सिसकियाँ सब भूल गयीं····सिर्फ छवि की याद सता रही थी। अगर स्वदेश छोड़ने से पहले एक बार उससे मिल लेता····तो शायद मन का बोझ कुछ कम हो जाता। फिर शायद उसे भारत लौटने की आवश्यकता भी नहीं रहती।

वायुयान हवा में तैर रहा था।

● ● ●

९

शेखर की कल्पनाओं का स्वर्ग, लंदन का हवाई अड्डा आ पहुँचा। वायुयान हीथ-रो हवाई अड्डे पर उतरा।

शेखर एयर-वेग़ और चेस्टर सम्हाले नीचे उतरा। प्रशंसात्मक दृष्टि से उसने चारों ओर दृष्टि घुमायी। गर्व से वह गुब्बारे की तरह फूल उठा। उसका पाँव ही धरती पर नहीं पड़ रहा था। वह भावनाओं एवं प्रसन्नता के बवण्डर में उड़ा चला जा रहा था।

हवाई अड्डे से लंदन शहर लगभग १४-१५ मील दूर था। सात शिलिंग का टिकट खरीदकर वह 'बस' द्वारा लंदन शहर में पहुँचा। 'नाइट-ब्रिज' के ऊपर 'हाईड-पार्क होटल' के भव्य गगनचुम्बी भवन में उसने कमरा लिया।

उसकी इच्छा थी कि पहले वह दो-चार दिन लंदन की स्वतन्त्र रूप से सैर कर ले, फिर पिता को सूचित करे।

होटल में सामान रखकर, चेंज किया। फिर कैमरा लटकाकर घूमने निकला। 'वेस्ट-मिनिस्टर एवे' गया, जहाँ राजपुरुषों और दूसरे विख्यात लोगों के मुर्दे दफनाये गये थे। वहाँ उसने, लोकतन्त्र की सजग प्रहरी, ब्रिटिश पार्लियामेण्ट देखी। हाउस ऑफ लार्ड्स और हाउस ऑफ कामन्स की ऐतिहासिक इमारतें देखीं। मुख्य भवन के ऊपर 'बिग् बेन टावर' देखी। यह घड़ी जैसे प्रतीक थी, उस समय जो गुजर चुका था, और उस समय का, जो आनेवाला था। 'वेस्ट-मिनिस्टर एवे' एक संधिस्थल था। एक ओर इतिहास कब्रों में दफनाया पड़ा था, दूसरी ओर वर्तमान और भविष्य का प्रतीक—पार्लियामेण्ट हाउस था, जिसकी जड़ें अतीत के इतिहास में गहरी चली गयी थीं।

फिर टेम्स नदी पर बने लंदन-ब्रिज को देखा। वहाँ से लंदन शहर के कई चित्र उतारे। वहाँ से फिर दूसरे पुल 'टावर ब्रिज' पर गया। वहीं 'टावर-म्यूजियम' देखा। कड़ा पहरा था। महारानी का ताज एवं दूसरे जवाहरात उसी संग्रहालय में प्रदर्शित थे। भारत का ऐतिहासिक रत्न 'कोहनूर हीरा' भी वहाँ देखा। उसे देखकर शाहजहाँ याद आया शेखर को! मगर अब तो भारत में समाजवाद की आँधी चल रही है। गाँधी-टोपी पर यह हीरा कौन लगाएगा?

उसी संग्रहालय में शेखर ने हीरों जड़ी मूठवाली तलवार देखी, जो अफ्रीका से लायी गयी थी। शेखर को बड़ा अजीब लगा, कहाँ हिंसा की प्रतीक निष्ठुर तलवार और कहाँ श्रृंगार का रत्न 'हीरा'! दोनों का मेल कैसा? हो सकता है अंग्रेज जाति के चरित्र का प्रतीक ही यह तलवार हो। निष्ठुर, निर्विकार, निर्दयी…तलवार की तरह, रसिक, विलासी एवं भोगी… उसमें जड़े रत्न हीरों की तरह!!

सारा दिन घूमते-घामते शेखर थक गया। शाम को ही वह होटल वापस लौट आया।

उस दिन गुरुवार था। शाम को टेलीविजन पर बहुत आकर्षक मनोरंजन से सरावोर प्रोग्राम 'फ्रास्ट रिपोर्ट' आ रही थी। बड़ा दिलचस्प प्रोग्राम था।

कुछ देर आराम कर उसने माँ तथा डाक्टर अनुराधा को पत्र लिखे। डिनर लेकर जल्दी ही बिस्तर में धँस गया। लदंन की वह पहली बर्फानी रात थी। नया वातावरण, नयी जलवायु। मगर, शेखर बेसुध नींद की बाँहों में सोया था।

अगले दिन भी उसने घूमने का प्रोग्राम बनाया। घूमता-घामता वह 'अर्ल्स कोर्ट' पहुँचा। वहाँ से एक शिलिंग का टिकट खरीदकर 'ब्ल्यू लाइन' से 'पिकैडली सर्कस' स्टेशन पहुँचा !

स्टेशन की चकाचौंध देखकर उसकी आँखें चौंधिया गयीं। वहाँ एक ऐसी घड़ी देखी, जिसमें दुनिया में उस वक्त सभी प्रमुख देशों में क्या समय होंगे, यह सरलता से देखा जा सकता था। वहाँ बहुत आकर्षक 'शो विण्डो' बनी थी। कुछ देर प्लेटफार्म पर ही निरुद्देश्य भाव से टहलता रहा। उसने देखा, स्टेशन पर पाँच दिशाओं में पाँच दरवाजे थे, जहाँ से पाँच रास्ते जाते थे। वह 'आक्सफोर्ड स्ट्रीट' की तरफ चला गया। मेफेयर स्ट्रीट से चक्कर लगाता वह 'सोहो स्क्वायर' जा पहुँचा। फिर वहाँ 'ग्रीक स्ट्रीट', 'फ्रंथ स्ट्रीट' का चक्कर लगाया 'चाइनीज स्ट्रीट' से गुजरते हुए उसने किताबों और दवाओं, बहुत-सी दुकानें देखीं थी !

कहीं अश्लील साहित्य और अनावृत सुन्दरियों के चित्र बिक रहे थे, तो कहीं चरस-अफीम और भाँग की टिकियाँ वहाँ जगह-जगह उसने 'फिश और चिप्स शाप' (मछली व तले आलू की दुकान) की दुकानें देखीं, जो भारत की पान की दुकानों की याद दिला देती थीं। लोग २ शि० देते, कागज पर उन्हें फिश व चिप्स मिल जाते, और वे बड़े स्वाद से उसे खाते घूमते थे।

एक बात जो शेखर को बहुत खटकी, वह माता-पिता द्वारा की जानेवाली बच्चों की उपेक्षा थी। कुछ धनी एवं सम्पन्न-से दीखनेवाले माता-पिता अपने बच्चों को 'पैराम्बूलेटर' (बच्चों की चार पहियोंवाली गाड़ी) में डालकर भले ही घूमते हों, मगर अधिकांश दम्पति कुत्ते की तरह बच्चों के गले में स्ट्रैप डालकर, उन्हें पैदल ही घसीटते। वहाँ गोद में बच्चों को लेकर चलने का रिवाज ही न था।

भूख लगी थी। एक होटल में जाकर पेट भरा। फिर वही लन्दन की चिरकल्पित, बहुप्रतीक्षित गलियाँ एवं सड़कें। शेखर को सैलानियों की तरह पैदल

भटकने में बड़ा आनन्द आ रहा था। उसे लगा, कोलम्बस की तरह वह भी नयी दुनिया का अन्वेषी है। पाँव भले ही थक गये थे, मगर मन नहीं थका था।

धीरे-धीरे शाम हो गयी। चहल-पहल बढ़ने लगी। 'ग्रीक-स्ट्रीट' से गुजरते हुए उसने बहुत से नाइट-क्लब के बोर्ड लगे देखे थे—'गिगी क्लब', 'नाइट क्लब', 'ब्लू सिटी' 'कसीनो डी पैरिस!'

इन क्लबों की रंगीन रातों के सम्बन्ध में शेखर ने बहुत पढ़-सुन रखा था। आज उसे लगा, वह तिलस्म खुद देखेगा।

एक 'कफे' में बैठकर वह कॉफी पी रहा था। एक गोरा नवयुवक उसके पास आकर बोला, "गुड-इवनिंग!"

"गुड इवनिंग।"

"क्या मैं यहाँ बैठ सकता हूँ?" उसने अंग्रेजी में प्रश्न किया।

शेखर ने स्वीकृति दे दी।

उसने सिगरेट पेश की। धन्यवाद देकर शेखर ने एक सिगरेट ले ली।

"आप 'टूरिस्ट' हैं?"

"हाँ!"

"कहाँ से आये?"

"इण्डिया।"

"वेरी गुड!" फिर कुछ रुककर गोरा नवयुवक बोला, 'मेरा नाम 'जॉन मूर' है। आप मुझे सिर्फ 'जॉन' भी कह सकते हैं। मैं यहाँ 'डिपार्टमेण्टल स्टोर्स' में टाइपिस्ट हूँ।'

"मैं शेखर हूँ।"

जॉन ने जिज्ञासा की, "क्या भारत में हर साल करोड़ों लोग बिना भोजन के मर जाते हैं। माफ कीजियेगा, क्या वहाँ बहुत कम अस्पताल हैं? सुना है, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास को छोड़कर, सब जगह बैलगाड़ी और हाथी ही सवारी के साधन हैं। सड़कें कच्ची और टूटी-फूटी हैं। हर जगह गन्दगी और मच्छर हैं। नेहरू और गांधी को छोड़कर दूसरा कोई नेता नहीं है। हर शहर में राजा

होता है। वहाँ स्कूल-कॉलेज भी तीन-चार शहर के बीच एक-दो मिलते हैं। पंचानबे प्रतिशत लोग अनपढ़ और गवाँर हैं।"

शेखर के स्वाभिमान को पहली बार ठेस लगी। विदेश में पहली बार उसके अन्दर स्वदेश-प्रेम जागा। उसे लगा, किसी ने उसके मुँह पर तमाचा लगा दिया हो। उसने कुछ रोषपूर्वक कहा, "आप लोगों के मन-मस्तिष्क में यह गलत भावना किसने भर दी है? आप जिस भारत की बात कर रहे हैं, वह आज से पाँच सौ साल पहले भी नहीं ऐसा था। भारत में अकाल जरूर पड़ते हैं, मगर वहाँ भूख से कभी हज़ार लोग भी नहीं मरे, लाख और करोड़ की बात तो जाने ही दीजिए? शाहजहाँ ने ही जब पेशावर से कलकत्ते तक पक्की सड़क बनवा दी थी, तो फिर आज के युग में भला भारत में सड़कों का अभाव कैसे हो सकता है? भारत के प्रत्येक छोटे-बड़े राज्य चिकित्सा, शिक्षा और यातायात के साधनों पर, प्रति वर्ष करोड़ों रुपये खर्च करते हैं। आजादी के बाद भारत ने नयी करवट बदली है। प्रगति की यही रफ्तार रही, तो शीघ्र ही वह एशिया का सबसे सम्पन्न एवं प्रगतिशील देश बन जाएगा। आज भी एशिया में जापान के बाद भारत का ही नम्बर आता है।..."

जॉन से वार्तालाप का यह क्रम करीब एक, घण्टे तक चला। शेखर को उसका स्वभाव बहुत निष्कपट लगा। उसने जॉन से कहा, "मैं यहाँ के नाइट-क्लब देखना चाहता हूँ।"

जॉन को शिकार हाथ लगा। वह वस्तुतः इन क्लबों का एक वेतनभोगी शिक्षित दलाल था। शेखर को परदेशी समझकर अपने जाल में फँसाने के लिए ही, उसने उससे घनिष्ठता पैदा की।

शेखर को जॉन के रूप में गाइड मिला। जॉन उसे लेकर क्लब पहुँचा। शेखर ने, टिकट खरीदा। नीचे उतरे। अण्डर-ग्राउण्ड क्लब था। वहाँ एक दूसरा 'गेट कीपर' मिला।

"आप क्लब के मेम्बर हैं?"

"मैं दर्शक हूँ।"

"सिर्फ मेम्बर ही अन्दर जा सकते हैं ! आप दस शिलिंग देकर मेम्बर बन सकते हैं !" उसने बताया ।

शेखर ने प्रश्नसूचक नेत्रों से जॉन को देखा । उसने सहमति में सर हिलाया ।

लाचार टिकट पुनः खरीदना पड़ा । और नीचे उतरे । अन्धेरा-सा बड़ा हॉल था । लाइट बहुत अपर्याप्त और 'डिम' थी । एक तरफ 'बार' था । बीस-पच्चीस कुर्सियाँ पड़ी थीं । दूसरी तरफ एक छोटा-सा स्टेज था । चालीस-पचास दर्शक थे । कुछ महिलाएँ भी थीं । अधिकांश दर्शक वयोवृद्ध थे । दस-पन्द्रह विदेशी पर्यटक भी थे । सभी देशों के नागरिक थे ।

शराब की गन्ध और सिगार के धुएँ से वातावरण बड़ा अजीब हो रहा था । जॉन के साथ शेखर ने भी तीन-चार पेग लिये ।

बैण्ड बजा ।

एक निग्रो लड़की स्टेज पर आयी । नृत्य शुरू हुआ । शेखर ध्यान से देखने लगा । इस नृत्य में नृत्य के तत्त्व कम थे, शारीरिक प्रदर्शन एवं अश्लील कामोत्तेजक हाव-भाव अधिक थे । शेखर को बड़ा अजीब-सा लगा ।

धीरे-धीरे धुन बदली । लड़की ने कपड़े उतारने शुरू किये । एक-एक कर उसने सारे कपड़े उतार फेंके । एकदम नग्न हो उसने नृत्य शुरू किया । दर्शक एकाग्रचित होकर वासनामय नृत्य को देख रहे थे ।

तालियाँ बजीं । लड़की अन्दर भागी । फिर दूसरी अंग्रेज लड़की बाहर आयी । रंग गोरा, मगर हाव-भाव उसी निग्रो लड़की की तरह । वही वासनामय आमन्त्रण, उत्तेजना और शारिरिक प्रदर्शन । धीरे-धीरे वह भी एकदम विवस्त्र हो गयी ।......

तालियाँ बजीं । वह अन्दर भागी । एक चीनी लड़की आयी । वेश-भूषा अलग । मगर, शरीर एक ही था । शरीर, जो साधन था । नृत्य की शैली अलग, मगर भाव वही आदिम युग के पुराने । उसके अंगों की हर थिरकन मानो पुकार-पुकारकर कह रही थी, नारी मात्र भोग्या है । कठपुतली है, पुरुष के इशारों की गुलाम । पुरुष नचाता है, वह नाचती है । हर देश में, हर काल में, हर वेष में ...हजारों-लाखों सालों से नारी नाच रही है, पग में घुघँरू बाँध वह अविराम

नृत्य करती जा रही है···उसे पुरुष क्रूरतापूर्वक नचाये जा रहा है। एक पल का विराम नहीं। एक शरीर समाप्त होता, दूसरा पैदा होता है। उसे नचाया जाता है। वह टूटता है, फिर दूसरा खड़ा किया जाता है। पत्थर युग से स्पुतनिक युग तक प्रगति की दौड़ बहुत लम्बी थी, इन्सान ने बहुत लम्बी छलाँग लगायी। वेद, उपनिषद्, पुराण, गीता, रामायण, कुरान, बाइबिल-जैसे हजारों धार्मिक ग्रंथ रचे गये। कालिदास, तुलसी, प्रेमचन्द, प्रसाद, शेक्सपियर, गेटे, वर्डस्वर्थ से लेकर बनार्ड शॉ जैसे लाखों साहित्यकार पैदा हुए। मार्क्स, लेनिन, गाँधी, नेहरू, केनेडी, चर्चिल जैसे हजारों महान् विचारक, दार्शनिक एवं राजनेता पैदा हुए।··· मगर नारी आज भी आदिम युग की तरह···निर्वस्त्र, नग्न···हिंसक, कामी, लोभी और क्रूर पुरुषों के बीच गुलाम की तरह नाच रही है, नाचती जा रही है और शायद सभ्यता के अन्त तक नाचती रहेगी !···

शेखर के आगे इतिहास नाच रहा था, वर्तमान और भविष्य नाच रहा था। काला, गोरा, पीला, साँवला शरीर···· नृत्य करते हुए, निर्वस्त्र होकर···· आमन्त्रण दे रहा था।

····तुम सुख चाहते हो। लो, लूट लो। बटोर लो। एक नहीं, अनेक वर्ण-जाति व राष्ट्र के शरीर···निर्वस्त्र प्रस्तुत हैं।····तुम लन्दन सुख की तलाश में आये हो न ! फिर संकोच कैसा ? सुरा और सुन्दरी दोनों प्रस्तुत हैं !····

शेखर को लगा, उसके अन्दर से उसकी माँ बोल रही है। उसकी बहन उसे ताने दे रही है। वह घबड़ा उठा। उसने अपने अन्दर के देवता को मूर्छित करने के लिए, जल्दी-जल्दी दो-तीन पेग़ भरे। जॉन से कहा, "मन नहीं लग रहा है। कहीं और चलो !"

जॉन उसे दूसरे, तीसरे, चौथे क्लब में ले गया। हर जगह वही दृश्य, वही वातावरण। एक चीज जो शेखर को बहुत खटकी, वह हर क्लब में काम करनेवाली नृत्यांगनाएँ एक ही थीं। एक क्लब में कार्यक्रम पूरा कर, वही लड़की दूसरे क्लब में जाती, फिर तीसरे और चौथे क्लब में। शायद इन क्लबों का मालिक भी एक ही था। सभी क्लब भूमिगत थे।

शेखर ऊब उठा। आवरण ही शरीर को आकर्षक बनाता है, उत्सुकता जगाता है। नहीं तो एक ही हाड़-माँस की बनी पूरी सृष्टि है। नारी और पुरुष का शरीर, सभी देशों में विविधवर्णी होते हुए भी, एक ही जैसे हाड़-मांस का बना है। अगर लाज का केंचुल उतारकर सभी लोग निर्वसन हो जायें, तो बड़ा वीभत्स दृश्य होगा।

जॉन से शेखर की उकताहट छिपी न रह सकी। वह चेंज के लिए उसे एक नयी जगह ले गया। वहाँ पहुँचाकर उनसे विदा ली।

शेखर ने देखा, चारों ओर अर्ध-नग्न सुन्दरियों का जमघट था। जॉन के निर्देशानुसार उसने एक षोडशी आंग्ल सुन्दरी को पसन्द किया। वह उसके साथ एक सोफे पर बैठ गयी।

छोटे-छोटे प्यालों में शराब आयी। दोनों ने एक-एक पेग पी। परिचय हुआ। सुन्दरी शेखर से सटकर बैठी थी। सुगन्ध से शेखर का मन बहक रहा था। पुनः शराब आयी। शेखर ने इस बार इन्कार कर दिया। वह काफी पी चुका था।

सुन्दरी ने प्याले में दो पीतल की पतली सीखें डालते हुए समझाया—"अगर आप पाँच सीखें मुझे दे दें, तो क्लब का मालिक, मुझे आपके साथ जाने की छुट्टी दे देगा। मैं भी बाहर निकलकर आपके साथ घूमना चाहती हूँ।"

लाचार होकर शेखर ने और शराब का आर्डर दिया। पाँच पीतल की सलाखें जुटाने में उसे करीब दो सौ रुपये देने पड़े। रेट भी बहुत ज्यादा था तथा पेग भी बहुत ही छोटा था। खुली लूट और ठगी थी।

चारों तरफ यही नाटक चल रहा था।

पाँच सलाखें लेकर उस अंग्रेज युवती ने समझाया, "इंगलैण्ड में पुलिस बहुत तंग करती है। मैं तुम्हारे साथ बाहर निकलूंगी, तो उनलोगों को शक होगा। वे तुम्हें भी पकड़ लेंगे। तुम बाहर निकलकर पूर्ववाली सड़क पर जाओ। दस गज आगे एक कफे हैं, उसके बाहर तुम मेरी प्रतीक्षा करना। मैं कपड़े बदलकर, दस मिनट में वहीं आती हूँ।"

शेखर बाहर निकला। ढूँढ़ता हुआ कफे पहुँचा। बहुत सर्दी थी। खड़ा होकर सिगरेट पीने लगा। दस मिनट, बीस मिनट, तीस मिनट…एक घंटा बीत गया। कोई नहीं आया।

शेखर को गुस्सा आया। खूब उल्लू बनाया। टिकट और शराब के पैसे पानी में गये।

वापस पहुँचा। वहाँ पाँच-छह खतरनाक गुण्डे, काले-गोरे, खड़े चौकीदार कर रहे थे।

शेखर ने नीचे ज़ाना चाहा।

"किधर जाते हो? भाग जाओ, नहीं तो मार खाओगे?" लाल आँखें दिखाकर वे विगड़ पड़े।

शेखर घृणा व क्रोध से सुलगता, चुपचाप विना प्रतिरोध के वापस होटल लौट गया।

● ● ●

१०

शेखर ने जी-भरकर लंदन की सैर करी। 'स्ट्रिप टीज', 'जिप टीज' देखते-देखते वह ऊब उठा। उसका दिवा-स्वप्न भंग होने लगा। जिस लन्दन की उसने कल्पना की थी, उससे भिन्न लन्दन उसे देखने को मिला।

वहाँ उच्च तथा संभ्रांत-कुल की महिलाएँ भी पहले 'मिनी स्कर्ट' पहनती थीं, जो घुटने से ऊपर होता है। आजकल वहाँ 'माइक्रो-स्कर्ट' का फैशन तेज़ी से चल पड़ा था। यह 'मिनी-स्कर्ट का भी लघु संस्करण है।

वहाँ शराब से लोग ऊब उठे थे। नवयुवक एवं नवयुवतियाँ अब चरस, भाँग, अफीम वगैरह का ज्यादा उपयोग करने लगे थे।

शेखर को लन्दन शहर में भी वर्ग-भेद स्पष्ट देखने को मिला। शहर के बाहर एक छोर पर 'साउथ-हॉल' था, जहाँ अधिकतर भारतीय रहते थे। बाकी शहर मुख्यतः दो भागों में बँटा था 'वेस्ट एण्ड' और 'ईस्ट एण्ड'। एक ओर 'वेस्ट-एण्ड' में जहाँ शरीफ कहे जानेवाले सम्पन्न व प्रतिष्ठित व्यक्ति रहते थे, दूसरी ओर वहीं 'ईस्ट-एण्ड' में समाज का निम्न-वर्ग व असामाजिक तत्त्व रहते थे।

'वेस्ट-एण्ड' में मेफेयर के पास 'हार्लेस्ट्रीट' पर लखपति-करोड़पति सैकड़ों डाक्टर रहते थे। इनका काम सिर्फ प्रतिष्ठित एवं सम्पन्न घरों की कुँवारी कन्याओं के नाजायज गर्भ को गिराना था। एक बार कोई युवती इनके फंदे में फँस जाय उसे ये मनमाने ढंग से दोनों हाथ लूटते थे। इसी प्रकार इन डाक्टरों ने लाखों-करोड़ों की सम्पदा एकत्र कर ली थी।

'ईस्ट-एण्ड' में गन्दगी का साम्राज्य देखने को मिला। जितना साफ-सुथरा 'वेस्ट-एण्ड' है, उतना ही गंदा 'ईस्ट-एण्ड' था। यहाँ निर्धन वर्ग के अधिकांश लोग रहते थे। इस हिस्से में 'जुआघर', 'मदिरालय' और 'वेश्यालय' की संख्या ज्यादा थी।

समुद्र-तट के पास स्टेपनी, कमर्शियल स्ट्रीट है, जहाँ बदमाशों के अड्डे ज्यादा मिलते हैं। यहाँ जहाजियों के मनोरंजन के लिए सस्ती-बीमार लड़कियाँ रहती हैं, जो सिर्फ पाँच या दस शिलिंग के बदले अपना शरीर, सेक्स के भूखे भेड़ियों के हाथ बेचती थीं। इनसे सम्पर्क कर गरीब 'सेलर' और जहाजी बहुत-सी गंदी बीमारियाँ भी मोल ले लेते थे।

शेखर को जगह-जगह मूत्रालयों की दीवालों पर इन गन्दी संक्रामक बीमारियों के विरुद्ध चेतावनी के इश्तहार पढ़ने को मिले।

'ईस्ट-एण्ड' में घूमते हुए, उसने जगह-जगह एक और इश्तहार देखा—'क्या आप जानते हैं, रक्षागृहों में अस्सी हजार बच्चे बिना माँ-बाप के पल रहे हैं? आप उन्हें गोद लेकर अपना स्नेह दे सकते हैं!"

शेखर के मन-मस्तिष्क में बिजली चमकी। कभी 'हार्ले स्ट्रीट' का चित्र लहर जाता, कभी यह विज्ञापन दिमाग़ में कील की तरह चुभता।

एक ओर लाखों भ्रूणों की हत्या कर, ''हार्ले-स्ट्रीट' के डाक्टरों ने अपने लिए आलीशान भवन खड़े कर लिये, तिजोरियाँ सोने-चाँदी से भर लीं और दूसरी तरफ हजारों-लाखों अनाथ शिशु प्रति वर्ष रक्षागृहों में पल रहे हैं। इन अबोध बच्चों को पता नहीं, उनके वास्तविक माता-पिता कौन हैं? यह पीढ़ी जब युवा होगी, वह समाज से जरूर प्रतिशोध लेगी। उसका स्वर जरूर विद्रोही होगा। अपनें क्रूर एवं निर्दय माता-पिता के प्रति इन अबोध शिशुओं के मन-मस्तिष्क में जो विष-बेल पनपेगी, उससे पूरा समाज एवं राष्ट्र प्रभावित हुए बिना न रहेगा।

शेखर के होटल में एक इटैलियन दम्पति भी ठहरे हुए थे। एक शाम लॉन में टहलते हुए उनसे शेखर का परिचय हुआ। शेखर कई बार सोचता, किसी दिन समय मिले, तो उनसे कुछ बातचीत करें। मगर वे शादी के बाद हनीमून के लिए लन्दन आये थे; मुलाकात का अवसर बहुत कम मिलता था।

एक सुबह शेखर बरामदे में बैठा चाय की चुस्कियाँ ले रहा था। वे दोनों पास आये। शेखर के आमन्त्रण पर बैठ गये। शेखर ने उनसे पूछकर पहले 'कॉफी' का आर्डर दिया, फिर पूछा, ''लन्दन आपको कैसा लगा?''

''बहुत सुन्दर, सुहावना लग रहा है!''

शेखर ने विनोदपूर्वक कहा, ''आप 'हनीमून' के लिए आये हैं, शायद इसी-लिए आपको हर चीज सुहावनी लग रही है!''

महिला बोली, ''आप अकेले हैं, इसलिए आपको लन्दन नीरस लग रहा है!''

युवक ने विनोदपूर्वक कहा, ''लन्दन में आपको महिला-मित्र ढूँढ़ने में विशेष कठिनाई नहीं होनी चाहिए। क्या आपको कोई 'गर्ल-फ्रेण्ड' नहीं मिली?''

शेखर जोर से हँस पड़ा। फिर बोला, ''कल ही मैंने ईस्ट-एण्ड में एक विज्ञापन पढ़ा है। लन्दन के अनाथालयों में अस्सी हजार अवैध बच्चे बिना माँ-बाप के पल रहे हैं। मैं उन बच्चों की संख्या बढ़ाकर इङ्गलैण्ड का सरदर्द नहीं बढ़ाना चाहता।''

जोर का अट्टहास हुआ। युवती बोली, "आप यह क्यों भूलते हैं कि बच्चे अवैध कभी नहीं होते, माता-पिता ही अवैध होते हैं!" कोई माँ अपने हृदय के टुकड़े को अपने से अलग नहीं करना चाहती। औरत का दिल बहुत कमजोर और सहृदय होता है? मगर माफ कीजिएगा, यह पुरुष है जो एक तरफ छल-बल से औरत को गलत रास्ते पर ले जाकर अपनी भूख मिटाता है। फिर अपनी अवैध सन्तान के लिए, बड़े अनाथालय खुलवाकर अपनी उदारता का झूठा ढिंढोरा पीटता है। यह भी कितना क्रूर मजाक है कि सभ्य एवं प्रगतिशील देशों में भी अनाथालयों में हजारों-लाखों बच्चे बिना माँ-बाप के पलते हैं।"

इस बार इटैलियन युवक बोला, "संसार की हर महिला, चाहे वह किसी जाति, राष्ट्र और वर्ण की हो, शिक्षित या अशिक्षित हो···सारे दुष्कर्म का दोष हमेशा पुरुष समुदाय पर ही मढ़ती हैं। यह कितना बड़ा विरोधाभास है, एक तरफ महिला-समाज, पुरुष-वर्ग से हर क्षेत्र में समानता का अधिकार चाहती हैं, उसके लिए गला फाड़कर चिल्लाती है, दूसरी ओर अपने पाप पर पर्दा डालने के लिए, सारा दोष अभागे पुरुषों पर ही मढ़ती है। क्या सुरा, भोग एवं तृप्ति पुरुष ही चाहता है, महिला नहीं? अगर पुरुष स्वार्थी है तो महिला भी कम स्वार्थी नहीं होती।···इसलिए सारा दोष पुरुष-समाज पर मढ़ना, एकदम अन्याय-पूर्ण और अनुचित है!"

शेखर को वार्तालाप बहुत मनोरञ्जक लगा।

"युवती बोली, "हाँ, आप ठीक कह रहे हैं। लन्दन के नाइट-क्लब के सञ्चालक पुरुष नहीं, स्त्रियाँ ही होंगी। पेरिस के वेश्यालय पुरुष नहीं, कोई और ही चलाता होगा। स्त्री तो मात्र शारीरिक सुख एवं परितृप्ति के लिए, अपने नग्न शरीर का विज्ञापन और प्रदर्शन करती हैं, उसे अपनी हड्डियाँ गलाकर, जो डालर और पौण्ड प्राप्त होते हैं, उनसे वह अपने लिए सोने के महल खड़े करती है।··· पुरुष तो बेचारा, एकदम तटस्थ, निस्पृह एवं दर्शकमात्र है। स्त्री नचाती है, वह नट की तरह नाचता है। आपके कहने का मतलब यही है न?

युवक कुछ झेंपता हुआ बोला, "नहीं, पुरुष ही स्वार्थी और लोभी है। स्त्री तो मात्र कठपुतली है, विवश और गुलाम।"

शेखर ने बीच में हस्तक्षेप किया, "संसार के हर देश की स्त्री, पुरुष को शोषक, अत्याचारी एवं दुष्ट समझती हैं। मगर जितने पुरुष लेखक और कवि हैं, वे हमेशा नारी को देवी, अप्सरा,' करुणा की मूर्ति, पवित्रता की प्रतिमूर्ति एवं आदर्श प्रेरणा के रूप में सम्मानित और प्रतिष्ठित करते रहे हैं।"

"इसीलिए स्त्री जाति को इतना अभिमान हो गया और वह पुरुष का अपमान करने का साहस करती है!" इटालियन युवक बोला, "स्त्री माया है, मोह है, अन्धकार है, पतन की पहली सीढ़ी है। 'स्त्री' पाप का दूसरा नाम है। स्त्री के लिए संसार में करोड़ों पुरुष अब तक रणभूमि में बलि चढ़े। कितने बड़े साम्राज्यों के विनाश के पीछे किसी एक स्त्री का ही हाथ रहा। अंग्रेजी में इसी-लिए यह मुहावरा भी, चलता है, 'वीमेन, दाई नेम इज़ मिस्ट्री···!"

उसी वक्त कॉफी आ गयी। बातों का क्रम टूट गया।

× × ×

इङ्गलैण्ड पहुँचकर भी शेखर ने अभी तक अपने पिता से मुलाकात नहीं की थी। दूसरे दिन वह आलविन में 'इंडियन हाई कमीशन' के आफिस जा पहुँचा। यह 'वेस्ट एण्ड' में है।

भवन के बाहर, दोनों तरफ खम्भों पर शेर की मूर्ति बनी है। मुख्य द्वार के पास 'शो विण्डो' बनी हुई है। उनमें बनारसी साड़ी, हाथीदाँत के खिलौने। और ताजमहल का चित्र प्रदर्शित किया हुआ था। एक तरफ 'एयर-इंडिया' का प्रतीक, एक भारतीय राजा झुककर सलाम करते हुए कह रहा था, 'विजिट इंडिया'। यह खिलौना वहाँ बहुत आकर्षक ढंग से कोने में सजाकर रखा था।

सीढ़ियाँ चढ़कर, भवन में प्रवेश करते हुए दाहिनी ओर लगी संगमरमर की प्लेट पर शेखर का ध्यान गया। वह चौंक पड़ा। लिखा था।····

"इस भवन का शिलान्यास भारत के म्रसाट् पंचम जार्ज ने किया था···।"

उसके हृदय में ये शब्द बुरी तरह चुभे—"भारत के सम्राट्···।"

उसका बस चलता, तो वह संगमरमर के उस शिलाखण्ड को हथौड़ा मार-कर चूर-चूर कर देता। हमारी स्वतन्त्र प्रभुसत्ता सम्पन्न सरकार क्या वहाँ 'भूत-

पूर्व' शब्द भी नहीं जोड़ सकती ? गुलामी के दिनों की उस लज्जाजनक याद ने उसके मन-मस्तिष्क को आन्दोलित कर दिया ।

बाहर द्वारपाल के रूप में भी एक अंग्रेज बैठा था । शेखर को हँसी आ गयी ।

शेखर सोचने लगा—स्वतन्त्रता के फलस्वरूप, इतना तो परिवर्तन आया, सुन्दर सर्वोच्च कुर्सी पर बैठनेवाला अंग्रेज आज बाहर द्वारपाल बना बैठा है ! बेचारा, इस शिलाखण्ड की काली लिपि को ही देख-पढ़कर संतोष कर लेता होगा····आज हम भारत के साधारण वेतनभोगी चपरासी हैं तो क्या, हमारे पूर्वज वहाँ के शासक और सम्राट् थे ।

अन्दर जाने पर, सामने ही 'स्वागत-कक्ष' था । उसमें स्वागतार्थ एक भारतीय नवयुवती बैठी थी ।

शेखर ने नमस्कार कर हिन्दी में पूछा, "क्या आप बता सकती हैं कि मिस्टर चन्द्रमोहन कहाँ मिलेंगे ?"

उसने अंग्रेजी में उत्तर दिया, "बगल में लिफ्ट है । ऊपर चले जाइये । वहीं दफ्तर हैं । उनके कमरे के बाहर नेम-प्लट लगी है !"

शेखर ने जिज्ञासा की, "आप भारत के किस प्रांत की रहनेवाली हैं ?"

"दिल्ली !"

"फिर आप अंग्रेजी में मेरे हिन्दी प्रश्नों का उत्तर क्यों दे रही हैं । आप हिन्दी बोलना जरूर जानती होंगी !"

युवती के माथे पर बल पड़ गये । उसने कहा, "देखिये यह भारत नहीं, इङ्गलैण्ड है । यहाँ की राष्ट्रभाषा अंग्रेजी है । आप भी अंग्रेजी बोल सकते हैं !"

"मगर एक हिन्दुस्तानी को दूसरे हिन्दुस्तानी से अपनी भाषा में बात करने की यहाँ रोक नहीं होगी ।" शेखर बोला, "ब्रिटिश हाईकमीशन का भारत में भी दफ्तर हैं । मगर, वहाँ कोई भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी में बातचीत नहीं करता ।"

लड़की ने प्रश्न किया, "भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी कब से हुई ?"

"जिस दिन से आजादी की लड़ाई की बागडोर महात्मा गाँधी ने सम्हाली !" शेखर ने उत्तर दिया ।

टेलीफोन की घण्टी बजी । लड़की व्यस्त हो गयी । शेखर दाहिनी ओर वाचनालय में घुस गया । वहाँ सभी भारतीय भाषाओं के समाचार-पत्र पड़े थे । सबसे अधिक अंग्रेजी समाचार-पत्र थे, सबसे कम हिन्दी समाचार-पत्र देखने को मिले । शेखर ने स्वयं अपने से ही प्रश्न किया—"इस भारतीय हाईकमीशन के वाचनालय को देखकर, कौन कह सकता है कि भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी है ? लगता है, अंग्रेजी आज भी जैसे स्वतन्त्र भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा हो ?"

शेखर लिफ्ट से ऊपर पहुँचा । दूसरी मंजिल पर एक पुस्तकालय था । उसमें कोई पाठक नहीं था । पुस्तकों से आलमारियाँ भरी पड़ी थीं । मगर हिन्दी की कोई पुस्तक देखने को नहीं मिली । पूछताछ करने पर पता चला, थोड़े-से हिन्दी-उपन्यास जरूर हैं । मगर वे सिर्फ कर्मचारियों के लिए हैं । उनका कोई 'कैटलग' भी नहीं है । उसने एक भारतीय कर्मचारी से पूछा—"क्या आप लोग हिन्दी-उपन्यास पढ़ते हैं ?"

कर्मचारी ने कहा, "हमारे घर की स्त्रियाँ, जो कम अंग्रेजी पढ़ी हैं, वे ही उन्हें पढ़ती हैं । हमलोग तो सिर्फ अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, जर्मन भाषा से अनूदित उपन्यास ही पढ़ते हैं । हिन्दी में अच्छे उपन्यास हैं ही कहाँ ? हिन्दी में एक भी लेखक है, जो शरतचन्द्र के उपन्यासों की टक्कर ले सके ?"...

"आपने हिन्ची के कितने उपन्यास पढ़े हैं ?"

"हिन्दी में है ही क्या पढ़ने को ? सिर्फ एक रामचरित मानस है, वह भी वाल्मीकि के संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद ।"

शेखर को उसके हिन्दी ज्ञान पर तरस आया । उसने व्यंग्य किया, "आप जैसे ही हिन्दी-संस्कृत के तथाकथित विद्वान बिना पढ़े ही वेद को गड़ेरियों के गीत बता देते हैं ।

कर्मचारी रंज होकर, बिना रुके चल दिया । शेखर को उसकी अज्ञानता पर दया आयी । हिन्दी के विकास में रोड़े अटकानेवाले, ये ही अल्प हिन्दीज्ञानी शत्रु

हैं, जो रामचरित मानस को बिना पढ़े, वाल्मीकि रामायण का अनुवाद घोषित करते हैं।

× × ×

शेखर को अपने पिता का कमरा ढूँढ़ने में कोई परेशानी नहीं हुई। अचानक उसे सामने खड़ा देखकर पिता आवाक् रह गये। उन्हें आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। शेखर यहाँ कैसे ?

शेखर भी पिता को देखकर अवाक्, एक पल ठगा-सा खड़ा रह गया, उनके सन-से सफेद धवल केश, इस समय एकदम काले लग रहे थे। उनकी अवस्था दस-पन्द्रह वर्ष छोटी दृष्टिगत हो रही थी। रूप-रंग एकदम बदल गया था। रास्ते में अगर अनायास भेंट हो जाती, तो शायद वह उन्हें पहचान नहीं पाता।

दूसरे क्षण पिता-पुत्र एक दूसरे के गले से लिपटे खड़े थे। न जाने कहाँ से आँखों में बाढ़ आ गयी ? आँसू थमते ही न थे। रूमाल से आँखें पोंछकर पिता वापस कुर्सी पर बैठे। शेखर भी सामनेवाली कुर्सी पर बैठ गया। पिता ने भारी गले से पूछा, "सब अच्छी तरह है न ? माँ का स्वास्थ्य कैसा चल रहा है ?

"ठीक है…।"

"तुम अचानक यहाँ कैसे आये ? केबुल कर दिया होता, मैं एयरोड्रोम पर तुम्हें आकर 'रिसीव' कर लेता।" पिता बोले।

मैं आपको 'बिग सरप्राईज' देना चाहता था। मेरी पोस्टिंग लंदन हो गयी है। मुझे यहाँ आये भी आठ-दस दिन हो गये, होटल में ठहरा हूँ।"

"तुमने फोन भी नहीं किया ? तुम्हारा बचपन अभी तक दूर नहीं हुआ। तुम्हारी यह गैरजिम्मेदारीवाली बुरी आदत कब्र दूर होगी ?"

शेखर ने बात बदलते हुए पूछा, "आपके घर का 'एड्रेस' क्या है ?"

एक पल को पिता का चेहरा बुझ-सा गया। फिर अपने को सम्हालकर बोले, "यह कार्ड रख लो। इसमें पूरा पता और घर का फोन नम्बर दिया हुआ है !"

"फिर मैं होटल से सामान लेकर वहीं पहुँच जाऊँगा !"

पिता कुछ घबड़ाते हुए बोले, "ऐसी भी क्या जल्दी है।…तुम्हें होटल में कोई तकलीफ तो नहीं है।…बात यह है कि मैं पेइंग-गेस्ट की तरह रह

रहा हूँ। मकान मालिक का स्वभाव बहुत तेज है।…मैं जल्दी ही दूसरा 'सूट' किराये पर ले लूँगा। वहीं तुम भी आ जाना।"

पिता की बेचैनी देखकर शेखर को बहुत पीड़ा हुई। उसे आशा थी कि उसे अपने पास देखकर वह बहुत प्रसन्न होंगे।…अगर उसे पता होता कि उसे देखकर वे इस तरह परेशान हो उठेंगे, तो वह लंदन से विदा होने के समय ही उनसे मिलने जाता।

कॉफी आ गयी। पिता ने सिगार सुलगा लिया था। उसके धुएँ के बीच भी उनके ललाट की सलवटें छिपी न रह सकीं।

शेखर इच्छा रहते हुए भी, पूछ नहीं पा रहा था कि पिताजी, आप के सफेद बाल, इंगलैंड के बर्फीले मौसम में ज्यादा सफेद न होकर, काले कैसे हो गये ?

संकोच से उसकी जबान तालू से चिपक गयी। पिता ने फिर पूछा, "तुम्हें पैसों की जरूरत हो, तो ले लो। अभी मैं चेक दे दूँ।"

शेखर उठते हुए बोला, "मुझे जरूरत होगी, तो आप से जरूर ले लूंगा। अभी कोई ऐसी जरूरत नहीं है!"

पिता ने उसे विदा करते हुए कहा, "तुम अपने आफिस का पता और फोन नम्बर दे देना। मैं जल्दी ही मकान बदलकर तुम्हें बुला लूंगा।…तुम रोज मिल न सको तो कम-से-कम एक बार फोन से ही अपना हाल दे दिया करो!"

शेखर ने नमस्कार कर विदा ली। वह बहुत भारी और उदास मन से इंडिया हाउस से बाहर निकला।

● ● ●

शेखर को पिता के व्यवहार से दुःख और आश्चर्य हुआ।

लंदन आकर वे कितना बदल गये ?

उस रात शेखर के मन को पुरानी स्मृतियाँ कचोटने लगीं। उसे याद आया, एक रात वह अपने मित्र के घर रुक गया था। पिता ने दूसरे दिन तूफान खड़ा कर दिया था। आज वहीं पिता उसे होटल में ठहरने की स्वतन्त्रता दे रहे हैं।

उनके काले बाल एक प्रश्न-चिह्न की तरह उसके आगे लहर जाते। उसे भली प्रकार याद था कि वे खिजाब लगानेवालों से स्वयं कितनी घृणा करते थे। मगर लंदन आकर उनका यह कायाकल्प कैसे हुआ ?

दूसरे दिन उसने इंडियन हाईकमीशन के दफ्तर को फोन कर पता लगा लिया, पिताजी दफ्तर पहुँच गये हैं। ग्यारह बजे ढूँढ़ता-घूमता वह उनके फ्लैट पर जा पहुँचा।

बाहर अंग्रेजी में नेम-प्लेट लगी थी—'सी० मोहन, इंडियन हाईकमीशन !'

उसने घंटी बजायी। एक बुढ़िया ने दरवाजा खोला। शेखर ने उसे हाथ जोड़ते हुए कहा, "क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ !"

बुढ़िया ने सोफे पर बिठाते हुए उसका स्वागत किया। शेखर समझ नहीं पा रहा था, बात कहाँ से और कैसे शुरू करे ? उसने साहस कर पूछा, "मुझे पता चला है कि आपके यहाँ कोई कमरा खाली है !"

बुढ़िया ने साश्चर्य कहा, "नहीं, मैंने ऐसा कोई विज्ञापन किसी समाचार-पत्र में नहीं दिया। शायद आपको गलतफहमी हुई है।"

मकान तो अच्छा है, आप के लिए इसमें बहुत जगह है। फिर आप किराये पर एक कमरा क्यों नहीं दे देतीं ?" उसने पूछा।

कैसे दूँ !" बुढ़िया ने बताया, "इसमें मैं अकेले थोड़े ही रहती हूँ। मेरी बेटी और दामाद भी इसमें रहते हैं !"

"क्या करते हैं आप के दामाद ?" शेखर ने साहसपूर्वक पूछा।

वह भारतीय हैं। इंडियन हाईकमीशन के अधिकारी हैं। बहुत सहृदय हैं। बुढ़िया भावावेश में कह गयी, उन्हें पसन्द नहीं कि उनकी स्त्री कहीं नौकरी करे। मगर मेरी बेटी लूसी घर में दिनभर बैठ नहीं सकती। वह 'डेली मिरर' में प्रेस रिपोर्टर है।"

शेखर का खून बर्फ क तरह जम गया। कान बहरे हो गये। आँखों के आगे अँधेरा छा गया। उसे सारी दुनिया घूमती नजर आने लगी। धर्म, समाज, नैतिकता और सदाचार के बन्धन न माननेवाला शेखर, स्वतन्त्र, उन्मुक्त, स्वच्छन्द जीवन का प्रचारक युवक···आज अपने को बहुत कमजोर और भीतर से टूटता-बिखरता अनुभव कर रहा था। एक पल को उसे लगा, वह जिस राह पर गर्वपूर्वक चलते हुए, 'जीवन का स्वर्ग' सरलता से प्राप्त कर लेना चाहता था, वह राह उसे आज भ्रम, पश्चात्ताप और निराशा की एक कँटीली झाड़ी के पास यह पहुँचाकर समाप्त हो गयी।···वह किंकर्तव्य विमूढ़-सा निर्णय नहीं कर पा रहा था, क्या करे, किधर जाए? उसकी आँखों के आगे गंगा-सी पवित्र माँ का निष्कपट एवं निष्कलंक मुखड़ा कभी तैर जाता, कभी बहन रागिनी की भोली छवि और उदास दृष्टि लहर जाती। उसके पिता ने सबके साथ कितना बड़ा विश्वासघात किया?····

उदास, खण्डित शेखर ने बुढ़िया का अभिवादन किया और विदा ली। कभी मन आक्रोश से भर उठता। इच्छा होती, पिता के सामने जाकर दृढ़ता से पूछे, "लन्दन में अपनी हविश पूरी करने के विपुल साधन हैं। फिर विवाह क्यों आवश्यक था?····उन्हें परिवार के साथ विश्वासघात करने का क्या अधिकार था?"

मगर इतना साहस वह कहाँ से लाता? कभी सोचता—माँ को पत्र लिखकर लन्दन बुला ले। पिता की सारी कलई खुल जायेगी। मगर क्या माँ यह सदमा बर्दाश्त कर पायेगी? कभी इच्छा होती, लूसी से मिलकर वह उसकी हत्या कर, पिता की प्रेमलीला के घिनौने और निकृष्ट प्रकरण को हमेशा के लिए समाप्त कर दे।

मगर उसे ऐसा करने का क्या अधिकार?

रमेश बहुत याद आया। उसने ठीक ही लिखा था, जिस राह पर तुम गर्व से सर उठाये चल रहे हो, क्या उसी पथ पर रागिनी को चलने की स्वतन्त्रता तुम दे सकोगे ?

....उसे अनुभव हुआ, उसके पिता ने भी उसी राह का वरण किया। अगर वह रास्ता उसके लिए उचित है, तो पिता के लिए गलत कैसे और क्यों है ? इस तर्क का उसके पास कोई उत्तर नहीं था।

× × ×

मानसिक सन्ताप से सुलगता एवं जलता हुआ वह शाम को निरुद्देश्य टहलता हुआ 'हाईड-पार्क' पहुँचा।

जगह-जगह प्रेमी युवक-युवतियों के जोड़े घास पर चिपके, ओवर-कोट बिछाये लेटे चुम्बनों का आदान-प्रदान कर रहे थे। प्रेम के इस सार्वज़निक खुले प्रदर्शन से शेखर को खीझ-सी लगी।....सोचने लगा, सभ्य इन्सान एवं पशु-पक्षी में फिर अन्तर कहाँ रह जायेगा ?...भारत में सार्वजनिक स्थानों पर इस प्रकार का खुला रमण पशु ही करते दिखेंगे।... इस माने में भारत लन्दन से बहुत अच्छा है। उसे लन्दन के सिनेमाघर भी इस दृष्टि से अजीब लगे। वहाँ बहुत सारी कुर्सियाँ बीच में हैण्डिल के बिना देखने को मिली। अल्पवयस्क टोडी ब्वॉय एवं गर्ल-फ्रेण्ड, सिनेमा-हॉल का उपयोग, प्रेम के स्वच्छन्द उपयोग एवं वासना-पूर्ति के लिए करते हैं। सामने स्क्रीन पर जो फिल्म चलती है, उसके अतिरिक्त सैकड़ों छोटी प्रेमलीला की फिल्में, इन जुड़वा सीटों पर चलती रहती हैं। किसी को, किसी का भय और संकोच नहीं। आगे-पीछे कौन बैठा है, देखने-सोचने की फुर्सत नहीं है। शारीरिक प्रेम का आवेग बड़ा ही क्षिप्र किन्तु ऊँचा होता है।

उसे एक मित्र ने बताया था, एक विद्यालय में १२-१४ वर्ष के अल्पवयस्क बच्चों को घर के काम में एक निबन्ध लिखने को दिया गया। लड़कों को दिये गये निबन्ध का शीर्षक था—'आप अपने माता-पिता को कैसे सूचित करेंगे कि आपने लड़की को गर्भ दे दिया है ?' लड़कियों को दिये गये निबन्ध का शीर्षक था—'तुम माता-पिता को कैसे सूचित करोगी कि तुम्हें लड़के ने गर्भ दे दिया है।'

यह है इंगलैंड की नैतिक शिक्षा का उच्च स्तर !...

हाईड पार्क में जगह-जगह वक्ता भाषण दे रहे थे। वक्ता को इसकी परवाह नहीं, कोई उसकी बात सुननेवाला है या नहीं। वह पेड़-पौधे को ही अपनी बात ज़ोर-शोर से सुनाता जाएगा। मगर प्रायः सभी वक्ताओं के समक्ष छोटी-मोटी भीड़ एकत्र हो जाती थी।

शेखर अन्यमनस्क-सा एक जगह खड़ा हो गया। एक अमेरिकन गला फाड़कर चिल्ला रहा था, "नेहरू और नासिर की तटस्थता की नीति एक षड्यन्त्र एवं रङ्गीन धोखा है। वह हमारी आँखों में धूल झोंकना चाहते हैं। वे तीसरा शक्तिशाली गुट बनाकर रूसी गुट तथा अमेरिकन गुट में हमेशा तनाव बनाये रखना चाहते हैं। वे अपना स्वार्थ-साधन ही मुख्य लक्ष्य मानते हैं। उसकी तटस्थता एक ढकोसला है, फरेब है, जाल है…!"

शेखर को गुस्सा आया। इच्छा हुई, मंच पर जाकर वक्ता को कसकर चार-पाँच घूँसे दे मारे।…मगर फिर जब्त कर गया। वह आगे बढ़ गया।

दूसरे नीग्रो वक्ता फरमा रहे थे, "ये गोरे शासक हमारे घर में चोर-डाकू की तरह घुसकर, हमारे शासक एवं भाग्य-विधाता बन बैठे हैं। ये हमारा रक्त चूसते हैं, हमें दोनों हाथों से जी भरकर लूटते हैं, फिर हम पर मनमाना अत्याचार करते हैं। मगर, अब गुलामी की जंजीरें टूटने लगी हैं। अफ्रीका जाग उठा है। मैं अपने देशवासियों की ओर से तुम सबको खुला अल्टीमेटम देता हूँ… तुम्हारे शोषण के दिन समाप्त हो गये। इससे पहले कि हम तुम्हें रक्त-स्नान कराके, धक्के देकर, जूते मारकर अपनी भूमि से निकालें…तुम स्वयं समझदारी का परिचय देकर, बाइज्जत अपना बिस्तर गोल कर वहाँ से हट जाओ।…यह तुम्हें खुली चेतावनी एवं मेरे जाग्रत देश का अन्तिम अल्टीमेटम है…!"

कुछ दूर पर एक पाकिस्तानी वक्ता कश्मीर की दुहाई दे रहे थे, "भारत-पाकिस्तान का बँटवारा मज़हब के आधार पर हुआ। कश्मीर मुसलमानों का है। उसे जब तक पाकिस्तान नहीं प्राप्त कर लेगा, वह शान्ति से नहीं बैठा रह सकता। हम भारत को चेतावनी देते हैं, अगर वह हमारे हजार वर्ष के शासन का इतिहास भूल गया है, तो उसे जल्दी हम पुराना सबक एक बार फिर सिखायेंगे।…हम गीता और गांधी की अहिंसा में यकीन नहीं रखते, हम तल-

वार उठाना और चलाना भी जानते हैं। कश्मीर की जनता को आत्मनिर्णय का अधिकार मिलना ही चाहिए।...उसे हम यह अधिकार दिलवाकर ही रहेंगे।"

एक आइरिश श्रोता ने पूछा, 'पख्तूनिस्तान की जनता को फिर आत्म-निर्णय का अधिकार क्यों नहीं दे देते ?"

"डिक्टेटर भुट्टो ने क्या पश्चिमी पाकिस्तान की जनता को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया ? वे किस मुँह से कश्मीर में जनमत-संग्रह की बात करते हैं ?" एक दूसरे श्रोता ने पूछा।

वक्ता के हाथ से तोते उड़ गये। वे बगलें झाँकने लगे।

शेखर आगे बढ़ा। एक महिला चहक रही थी, "स्त्री जाति जाग चुकी है। उसका शोषण बन्द करो। अब वह पुरुष-समाज की कठपुतली नहीं है। उसका व्यापार बन्द करो। उसके जिस्म का व्यापार करनेवालों को, गोली मारी जाएगी। आज नहीं तो कल, इंगलैण्ड की पार्लियामेण्ट को स्त्री जाति के गौरव की रक्षा के लिए कानून बनाने ही पड़ेंगे।...पेरिस की नकलकर हमने इंगलैण्ड में भी नाइट-क्लब खोल लिये। मगर मैं अपनी पूरी आवाज से चिल्लाकर आपको बताना चाहती हूँ, ये क्लब इंगलैण्ड के चेहरे पर बदनुमा गन्दे दाग हैं।...इन्हें मिटाना ही होगा।...

× × ×

"हैलो...।"

"यस...प्लीज !" शेखर रुका।

एक खूबसूरत षोडशी फूलों का गुच्छा लिये खड़ी थी, 'क्या आप फूल खरीदेंगे ?"

शेखर ने उसकी आँखों में झाँकते हुए कहा, "हाँ, मैं फूलों का बहुत शौकीन हूँ।...क्या हिसाब बेचती हो ?"

"मेरा कोई दाम नहीं है !" किशोरी ने धीरे से फुसफुसाया, "आपका सन्तोष मेरी कीमत है। आप मेरे पीछे चलें। यहाँ बात करना खतरनाक है। सी० आई० डी० के आदमी सादी वर्दी में घूमते रहते हैं...!"

शेखर समझ नहीं पा रहा था, वह क्या करे ? वह चुपचाप किशोरी के पीछे-पीछे चलने लगा। वह कुछ देर के लिए अपनी मानसिक व्यथा को भूलना चाहता था।

किशोरी उसे एक मकान के दरवाजे पर ले गयी। शेखर भी उसके साथ मकान में प्रवेश कर गया।

एक कमरे में ले जाकर शेखर को बैठाया। सोफे के हैण्डिल पर बैठकर लड़की ने दो सिगरेट जलायी। एक शेखर के अधर पर रखी, दूसरी खुद उँगली में फँसाकर कश खींचने लगी

शेखर ने उसकी गुलाबी हथेलियाँ दबाते हुए पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है।"

"फ्लोरा।"

"यह 'पेशा' क्यों करती हो ?"

फ्लोरा जोरों से खिलखिला पड़ी। शेखर को लगा, जैसे नाचते-नाचते, किसी के घुंघुरू खुलकर, शीशे के फर्श पर जोर से बिखर गये हों…कुछ ऐसी ही उस हँसी की आवाज थी।

"क्या तुम कभी गिर्जे गये हो ?"

"मैं ईसाई नहीं हूँ।

"खैर, मुझे यह जानने की उत्सुकता नहीं कि तुम्हारा धर्म क्या है, मगर फिर भी एक बात तुम्हें मैं कहना चाहती हूँ। संसार के सभी धर्मों में, पवित्र ग्रथों में, पापों का प्रायश्चित्त भी लिखा हुआ है। भगवान के दरबार में भी घूस चलती है।"

शेखर बीच में टोकता हुआ बोला, "मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा !"

फ्लोरा उसकी गोद में लुढ़कती-सी बोला, "संसार एक खुला बाजार है… जहाँ सब कुछ बिकता है। धर्म, ईमान, सिद्धांत, नीति, राजनीति, विचार, कला, साहित्य, संगीत, इतिहास, वर्तमान, भविष्य…और मृत्यु भी ! फिर औरत ही अपवाद क्यों रहे ! उसे भी बिकना चाहिए, बिकती रही है…शायद हमेशा बिकती जाएगी।…."

फ्लोरा ने शेखर के गले में अपनी रेशमी बाँहें डाल दी और शेखर के अधरों ने, उसके अधर सी दिये !

फ्लोरा का उधड़ा शरीर, शो-केस में बिक्री के लिए सजा हुआ सामान था, शेखर खरीदार था। वह बिक रही थी, शेखर खरीद रहा था। वह खुली किताव थी, शेखर पढ़ रहा था।

शेखर उस वक्त भूल जाना चाहता था, उसके पिता ने लूसी से विवाह कर लिया है। वह सब कुछ भूल चुका था....अतीत...वर्तमान...भविष्य !!

उस वक्त सबसे बड़ी सच्चाई फ्लोरा थी, अनावृत, समर्पित, जीवित सत्य की प्रतिमूर्ति।

● ● ●

१२

एक सप्ताह बाद शेखर को पिता का फोन आया।

"शेखर।"

"हाँ, पिताजी।"

"अच्छे हो ?"

"आपकी कृपा है।"

"तुमने फोन नहीं किया ?"

"बहुत व्यस्त रहा।"

पिता गम्भीर होते बोले, "मैंने हाउस-लेडी को तैयार कर लिया है। तुम सामान लेकर मेंरे फ्लैट में चले आओ।"

शेखर एक पल को स्तब्ध रह गया। फिर अपने को सम्हालते हुए बोला, "आपको तकलीफ होगी, मैंने दूसरी जगह देख ली है।"

"बहस मत करो। कल तुम सामान लेकर वहाँ पहुँच जाओ।" पिता के स्वर में आदेश था, "मैंने उनसे यही कहा है कि भारत से मेरे एक मित्र का पुत्र आया है। दो-चार महीने में कोई दूसरी जगह मिल जाने पर हम दोनों उस नये फ्लैट में शिफ्ट कर जायेंगे। तुम मुझे डैडी न कहकर, अंकिल ही कहोगे।...लंदन में 'एकमोडेशन' की बहुत कमी है। इसलिए झूठ बोलना पड़ा।"

बिना उत्तर की प्रतीक्षा किया शेखर के पिता ने फोन रख दिया।

डैडी नहीं, अंकिल। शेखर का दिमाग चक्कर खाने लगा।

शेखर को लगा, घटनाएँ पूर्व नियोजित होती हैं। आदमी का कोई बस नहीं चलता। वह मात्र कठपुतली होता है। किसी अदृश्य शक्ति के हाथ का खिलौना?

हो सकता है वह 'लूसी' के मोह-जाल से पिता को स्वतन्त्र करने में सफल हो जाये? शायद इसी भवितव्य के लिए ईश्वर ने उसे लंदन भेजा हो।

वह दूसरे दिन सामान लेकर पिता के प्लैट में पहुँच गया। लूसी भी उपस्थित थी। परस्पर परिचय एवं अभिवादन हुआ।

बुढ़िया ने पहचानते हुए पूछा, "शायद हम पहले भी कभी मिल चुके हैं।"

शेखर को एक पल को काठ मार गया। चेहरा बदरंग हो गया। दूसरे पल अपने को सम्हालते हुए बोला, "हाँ, उस वक्त मैं मकान की तलाश में आया था। आपने बताया था कि प्लैट खाली नहीं है।"

पिता ने बीच में हस्तक्षेप किया, "सामान ठीक से बगल के कमरे में रख लो।"

शेखर अटैची उठाकर बगल के कमरे में गया।

आलमारी में सामान रखते-रखते उसकी निगाह बगल की टेबुल पर पड़ी। फूलदान के पास लूसी का चित्र फ्रेम में जड़ा सजा था। वह एक पल को निष्पलक उधर ही देखता रहा। उन भूरी आँखों में अपूर्व सौन्दर्य था। सुनहरे केशों के बीच मुस्कराता गोल चेहरा ऐसा लग रहा था, जैसे किसी माली ने मोरपङ्खी के गुलदस्ते के बीच एक बड़ा गुलाब जड़ दिया हो। पतले अधरों पर खिंची

मुस्कान की लकीर, शेखर को ऐसी लगी, जैसे मरमरी स्फटिक फर्श पर चाँदनी विछल गयी हो !!

"मगर 'लूसी' के बारे में ऐसा सोचना, पाप है ! वह मेरी माँ है ?" मन के के किसी कोने से आवाज़ उठी ।

"माँ ?···नहीं, यह माँ-जैसे पवित्र शब्द का अपमान हैं । मेरी माँ तो गंगा-जैसी पवित्र, नर्मदा-जैसी निर्मल एवं हिमालय-जैसी महान् है ! यह रूपवती आंग्ल तितली, वेश्या भले ही बन जाये···मगर माँ नहीं कहला सकती ।"

शेखर अपने को अन्दर से कुछ टूटता-सा महसूस करने लगा । थका-सा वह एक आरामकुर्सी पर लुढ़क गया । "गोरी चमड़ी होने से या विधर्मिणी होने-मात्र से नारी क्या 'माँ' नहीं बन सकती ? माँ सभी देशों में, सभी रङ्गों और धर्मों में होती हैं । माँ युवती भी हो सकती है, वृद्धा भी ! फिर लूसी, मेरी माँ क्यों नहीं हो सकती ? मेरे बाप की पत्नी, मेरी 'माँ' ही तो कहलायेगी ?"

"नहीं···नहीं ।" शेखर ने अपनी आवाज़ को दवाने के लिए मुट्ठियाँ भींचीं । थकावट और घवड़ाहट छिपाने के लिए सिगरेट सुलगायी । दो-चार तेज़ कश लगाये, ढेर सारा धुआँ छोड़ा । मगर मन में शान्ति कहाँ ?

लूसी मेरे पिता की प्रेमिका हो सकती है, रखैल बन सकती है, मगर मेरी 'माँ' नहीं बन सकती । मैं उसे माँ नहीं मान सकता ।

तभी पिता ने कमरे में प्रवेश किया । शेखर की पीठ दरवाजे की तरफ थी । धुँआ देखकर पिता ठिठके । खाँसकर अपनी उपस्थिति का भान कराया ।

शेखर ने तुरन्त सिगरेट बुझाकर बूट से मसल दी । उठ खड़ा हुआ ।

पिता ने पूछा, "कपड़े रख लिये ?"

"हाँ डैडी ···· ओ सॉरी, भूल गया । अङ्किल ···· !" शेखर कुछ हकलाते हुए बोला ।

पिता झेंप गये । बोले, "चलो नाश्ता तैयार है !"

आलमारी वन्दकर शेखर पिता के साथ दूसरे कमरे में गया ।

नाश्ते की मेज पर एक ओर लूसी की माँ बैठी थी । दूसरी ओर शेखर वैठ गया । पिता बुढ़िया की वगल में बैठ गये । लूसी कॉफी का पॉट टेबुल पर रख-

कर शेखर की बगल में बैठ गयी। शेखर को लगा, जैसे सुगन्ध से सारा कमरा महक गया। लूसी ने शेखर से पूछा, "लन्दन में आपने क्या-क्या देख लिया ?"

शेखर समझ नहीं पा रहा था कि इस प्रश्न का क्या उत्तर दे। एक पल रुककर बोला, "अभी तो ठीक से कुछ देख नहीं पाया हूँ। मगर जितना भी देख सका हूँ, लन्दन शहर बहुत खूबसूरत है !"

"क्या चीज यहाँ की सबसे ज्यादा खूबसूरत लगी ?" बिना झिझक लूसी पूछ बैठी।

शेखर के मन में विचार आया कह दे—आप ? मगर सामने उसके पिता और लूसी के पति बैठे थे। वह ऐसी बदतमीजी कैसे कर सकता है ? एक पल रुककर बोला, "मुझे लन्दन की सबसे खूबसूरत यह अदा लगी, वह जैसा ऊपर से दिखता है, वैसा भीतर से नहीं है। सभी कुछ, हास-विलास, शिष्टाचार, रोमांस····आर्टिफिशियल, यानी बनावटी है। अगर किसी को हँसते भी देखता हूँ, तो लगता है, वह जबरन हँसी का प्रदर्शन कर रहा है।"

लूसी खिलखिलाकर हँस पड़ी। फिर बोली, "आप बहुत दिलचस्प नवयुवक हैं। मैं आपसे किसी दिन फुर्सत से 'इण्टरव्यू' लूँगी।"

"लन्दन या भारत के सम्बन्ध में ?" शेखर ने पूछा।

"लन्दन के सम्बन्ध में ही विशेष जिज्ञासा है। एक भारतीय की दृष्टि में लन्दन कैसा लगा, यही जानना चाहूँगी !" लूसी ने बताया।

शेखर इस बार हँसा। बोला, "देखिये, अगर आप मुझसे भारत के बारे में 'इण्टरव्यू' लें, तो ज्यादा अच्छा होगा ! लन्दन के सम्बन्ध में मुझे आपसे 'इण्टरव्यू' लेना चाहिए !"

"क्यों ?"

"अगर लन्दन के सम्बन्ध में मेरा 'इण्टरव्यू' लन्दन के समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो गया, तो मुझे आशङ्का है कि ब्रिटिश सरकार मुझे चौबीस घण्टों में लन्दन छोड़ने का हुक्म दे देगी।" शेखर बोला।

"क्या लन्दन इतना खराब लगा आपको ?" लूसी ने सीधे पूछ लिया।

शेखर मुस्कराया। बोला, "बात यह है, यहाँ समाचारपत्रों और पत्रिकाओं में भारत के सम्बन्ध में जैसे रंगे हुए, काल्पनिक एवं आक्षेपपूर्ण समाचार पढ़ने को मिले, उससे मन बहुत मैला हो गया हैं। लगता हैं 'अंग्रेज' अभी तक भारत को अपना गुलाम समझता है। इसीलिए भारत में सारी बुराई ही दिखायी पड़ती हैं।"

लूसी का चेहरा एक क्षण को बदरंग हो गया। शेखर की बात में सच्चाई थी।

लूसी की मम्मी ने बीच में हस्तक्षेप किया, "आप नवयुवक हैं, इसलिए आपके नेताओं ने आप के मन में अंग्रेज जाति के प्रति घृणा का भाव भर दिया है। मगर हकीकत वह नहीं है, जैसा आप सोचते या समझते हैं!"

लूसी ने बात सम्हाली, "आपने ऐसी कौन-सी खबर पढ़ी है, जिससे आपके आत्मसम्मान को चोट पहुँची?"

"कल ही एक चित्र और समाचार छपा है। बिहार के एक गाँव में किसी पादरी ने कुँआ खुदवाया है। गाँववाले उस पादरी को भगवान की तरह पूजते रहे हैं। भारत की आजादी के बाद भी सभी गाँवों में कुएँ न खुदवाये जा सके। जनता भूख-प्यास से व्याकुल है। भारत में प्रतिवर्ष लाखों व्यक्ति रोटी व पानी के अभाव में मृत्यु का आलिंगन करने को विवश होते हैं।...इस कलुषित समाचार से क्या ध्वनि निकलती है? हकीकत तो यह है, भारत में आजादी के बाद कोई भी अन्न या जल के अभाव में आज तक नहीं मरा।" शेखर रोष-पूर्वक बोला

लूसी कुछ हतप्रभ-सी होती बोली, "अगर आपके देश में अन्न की कमी नहीं, तो फिर करोड़ों डालर का अन्न अमेरिका से क्यों मँगाते हैं?"

"इसीलिए कि भारत में कोई भी व्यक्ति भूख से मरने न पाये।...भारत में लाखों-करोड़ों कुएँ, सैकड़ों नहरें, हजारों तालाब हैं। फिर भी बड़े-बड़े बाँध बनाये जा रहे हैं। देश तेजी से करवट बदल रहा है। स्कूल, कॉलेज, अस्पताल, बिजलीघर, उद्योग सभी क्षेत्रों में भारत प्रगति कर रहा है। नव-निर्माण का

चक्र गतिशील है। कभी इस दृष्टि से भी आपके समाचार-पत्रों ने भारत का पुनर्मूल्यांकन किया ? नहीं । आखिर क्यों ?" शेखर ने रोषपूर्वक प्रश्न किवा ।

पिता ने बातों का रुख बदला, "तुम भी कैसा नीरस विषय ले बैठे ? दफ्तर नहीं जाना है क्या ?"

गोष्ठी भंग हो गयी ।

लूसी को शेखर ने बहुत प्रभावित किया । शेखर भी लूसी के प्रति आकृष्ट हुआ । लूसी की माता जो विचारों से अत्यधिक संकीर्ण थी, उसे शेखर के विचारों में 'विद्रोह' का स्वर बहुत बुरा लगा । वह गुलाम भारत के पिछड़ेपन से ज्यादा संतुष्ट एवं प्रसन्न थी । उसे भारत की प्रगति की वात, वहुत अरुचिकर लग रही थी ।

दफ्तर जाते वक्त लूसी ने शेखर को अपने दफ्तर में आमन्त्रित किया । उसने बताया, "मैं आपको सम्पादक एडवर्ड ब्राऊन से मिलाऊँगी । वे दो-तीन वार भारत घूम आये हैं । आपसे मिलकर उन्हें प्रसन्नता होगी ।"

शेखर ने किसी और दिन आने का वचन दिया ।

× × ×

न चाहते हुए भी शेखर और लूसी में घनिष्ठता बढ़ने लगी । इस घनिष्ठता में शेखर कम आगे बढ़ा था । लूसी ज्यादा ! शेखर के संकोच का कारण, पिता से लूसी का सम्बन्ध था । लूसी के आगे वढ़ने का कारण शेखर की जवानी, सुन्दरता और तन्दुरुस्ती थी । कभी-कभी शेखर के मन में आता, वह लूसी से सच-सच सव कुछ वता दे । मगर सहम जाता—यह सदमा शायद उसके पिता बर्दाश्त न कर पाएँ ।

एक ओर माँ की करुण स्मृति थी, दूसरी ओर पिता का सुख ! किसके प्रति वह निष्ठुर बने ?

कभी इच्छा होती, लन्दन छोड़कर भारत लौट जाये । जिसका जो भवितव्य है, होने दे । वह विधाता नहीं, मनुष्य है । अगर उसे जीवन में सुख की लालसा है, वह हर जगह से सुख की अन्तिम वूँद निचोड़ लेना चाहता है, तो उसे क्या अधिकार है कि वह पिता के सुख-मार्ग का रोड़ा बने ?

छवि की याद आयी। लूसी सुन्दर है, मगर इसमें छवि-जैसा स्वाभिमान कहाँ ? लूसी में रूप का अहं जरूर है, मगर छवि की बात ही दूसरी थी। वह जरा-सा भी अपमान, उपेक्षा एवं निष्ठुरता नहीं सह सकती थी।

शेखर के जीवन में, न जाने कितनी लड़कियाँ आयीं, मगर किसी ने उसे प्रभावित नहीं किया। उसने उन्हें हमेशा दिल बहलानेवाली गुड़िया ही समझ कर अपना जी बहलाया। मगर, छवि की बात ही दूसरी थी। उसने शेखर के अहम् को चोट पहुँचायी। वह जी बहलाने की साधारण गुड़िया बनने को कदापि तैयार नहीं थी।

लूसी का फोन आया।

"हैलो !"

"गुड इवनिंग !"

"आज पिक्चर चलना है। मैंने टिकट मँगवा लिये हैं।" लूसी बोली।

"आज मेरा 'मूड' नहीं है !"

"मूड तो बनाने से बनता है !"

शेखर भारी आवाज़ में बोला, "तुम डैडी के साथ चली जाओ !"

"क्या, कौन डैडी ?" लूसी कुछ चौंकती हुई बोली।

शेखर ने भूल सुधारी, "आई मीन, अपनी मम्मी के साथ ?"

"मजाक बन्द करो। मैं तुम्हें दफ्तर से लेने आऊँगी।" लूसी ने रिसीवर रखकर, शेखर को इन्कार करने का अवसर ही नहीं दिया।

× × ×

निर्धारित समय पर लूसी आयी। भारी मन से शेखर साथ हो लिया।

"क्या बात है ?" लूसी ने शरारत से पूछा, "अपनी प्रेमिका की याद आ रही है।"

"हाँ लूसी। आज अचानक लन्दन में पहली बार महसूस हुआ, भारत कितना अच्छा और कितनी दूर है !" कहते हुए शेखर ने उच्छ्वास प्रकट किया।

लूसी ने शेखर की हथेलियाँ कसकर दबायी और धीरे से कहा, "फिक्र मत करो, डार्लिंग। मैं जो तुम्हारे पास हूँ।"

"मगर तुम तो किसी की पत्नी हो!" शेखर ने डरते-डरते कहा।

लूसी बड़े जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ी। शेखर को 'शॉक' लगा। इस हँसी का मतलब क्या?

लूसी बोली, "तुमलोग भारत में शायद 'पत्नी' को 'गुलाम' का पर्यायवाची शब्द समझते हो। पत्नी क्या 'स्त्री' नहीं होती, उसे स्वतन्त्रता से कैसे वंचित किया जा सकता है? फिर मैं भारतीय पत्नी की तरह पति की 'आर्थिक दासी' भी नहीं। इसीलिए मैं 'मुक्त' एवं स्वतन्त्र हूँ।"

"स्वतन्त्रता का अर्थ 'स्वेच्छाचारिता' तो नहीं होता?" शेखर ने टोका, "तुम पति की आर्थिक दासी नहीं, पर इसका यह मतलब कैसे निकाला जा सकता है कि तुम्हें विश्वासघात करने का भी अधिकार है?"

"विश्वासघात का क्या मतलब भारतीय शब्दकोश में होता है?" लूसी ने भृकुटी टेढ़ी कर पूछा।

"पति के प्रति पूर्ण समर्पण, तन-मन-वचन से! इसी को हम विश्वास कहते हैं!" शेखर ने समझाया।

लूसी ने सिगरेट जलायी। फिर कश खींचकर बोली, "इसी विश्वास के संकीर्ण दायरे ने तुम्हारे समृद्ध देश को बार-बार विदेशियों का गुलाम बनाया। जरा दृष्टिकोण को विस्तृत करो। विश्वास को संकीर्णता के नैतिक बन्धनों से मुक्त कर दो, फिर देखो, जीवन में कितना सुख, सौन्दर्य है और संतुष्टि है! स्त्री-पुरुष, मूलतः एक दूसरे के पूरक होते हैं। घर बसाने के लिए पति-पत्नी के रिश्ते बने, मगर संसार का सारा सुख इस संकीर्ण और सीमित घेरे में ही नहीं प्राप्त हो सकता। इसके लिए स्वतन्त्रता, पूर्ण स्वतन्त्रता चाहिए।"

"सुख की परिभाषा क्या है?" शेखर अनायास पूछ बैठा।

लूसी खिलखिला उठी। फिर एक ज़ोर का कश लगाया और सिगरेट फेंक दी। उसने जैसे शेखर को समझाते हुए कहा, "सुख को परिभाषा में नहीं बाँधा जा सकता। जो हमारी इच्छा हो, उसे प्राप्त करने की स्वतन्त्रता को ही 'सुख' कहा जा सकता है। मेरी इच्छा अगर 'चरस' पीने की हो, और मुझे चरस

की सिगरेट पीने से कोई न रोके, तो मै अपने को परम सुखी एवं संतुष्ट अनुभव करूँगी !"

"अगर पति-पत्नी के सुख के केन्द्र अलग-अलग हों, तो क्या दाम्पत्य जीवन में वैमनस्य और विरोध नही पैदा होगा ?"

"इसके लिए ब्रिटिश कानून ने तलाक की व्यवस्था कर दी है।" लूसी बोली।

"मगर तुम विश्वासपूर्वक यह कैसे कह सकती हो कि तलाकप्राप्त सभी स्त्री-पुरुष संतुष्ट एवं पूर्ण सुखी हैं ?" शेखर ने प्रश्न किया।

"भारत में जहाँ तलाक का ज्यादा प्रचलन नहीं है, क्या सभी स्त्री-पुरुष संतुष्ट एवं पूर्ण सुखी हैं ?" लूसी ने प्रश्न का उत्तर प्रश्न से ही दिया।

सिनेमाहॉल आ गया। बातों का सिलसिला अपने-आप रुक गया। हाल के अन्दर जाकर बैठ गये। दोनों कुर्सियों के बीच कोई 'हैण्डिल' नहीं था। हॉल में इस प्रकार की बहुतेरी कुर्सियाँ लगी थीं। दर्शको में स्कूल-कॉलेज के छात्र-छात्राओं की ही संख्या ज्यादा थी।

पिक्चर शुरू हुई। शेखर को पर्दे से ज्यादा, हॉल में चल रहा ड्रामा ही पसन्द आया। कहीं चुम्बन, कहीं आलिंगन। कोई किसी की गोद में बैठा है, कोई किसी के सीने से चिपका लेटा-सा बैठा है।

शेखर हँसा। बोला, "आज मुझे विश्वास हो गया, आपलोग सचमुच सभ्य एवं प्रगतिशील हैं। इस हॉल में 'सुख' के सैकड़ों स्टाल और एक छोटी-सी प्रदर्शनी लगी हुई है। लन्दन में 'सुख' कितना सस्ता और सार्वजनिक रूप से सुलभ है, यह देख ईर्ष्या होती है !"

शेखर के व्यंग्य से लूसी मन-ही-मन तिलमिला गयी।

"डारविन ने मनुष्य का क्रमिक विकास बन्दरों से बताया है। मगर मुझे लगता है, विकास का यह दौर 'कुत्ते' की योनि में जाकर समाप्त होगा। हमारे यहाँ गली-कूचे और सड़कों पर कुत्ते ही इतनी स्वतन्त्रता से 'सुख' का स्वच्छन्द उपभोग करते हैं। उन्हें भी किसी सामाजिक या कानूनी बन्धन का भय नहीं होता।" शेखर बोला।

"स्टॉप नानसेंस !" लूसी गुस्से से तिलमिला उठी।

"बुरा मान गयी।"

'नहीं डार्लिंग।' लूसी ने जल्दी से दो-तीन चुम्वन जड़ दिये। शेखर घवड़ाकर हतप्रभ होकर चुप हो गया।

● ● ●

१३

शेखर के न चाहते हुए भी लूसी उसके जीवन में दिन-प्रतिदिन निकट आती गयी। शेखर घवड़ा उठा। उसकी मान्यताएँ टूटने लगीं। जिस स्वच्छन्दता को वह सुख का पर्याय समझता था, वही आज उसके मन में काँटे की भाँति चुभने लगी।

लूसी उसकी माँ है ?

माँ से पुत्र का वात्सल्य प्रेम तो ठीक हो सकता है, मगर अभिसार-भरा प्रेम-सम्वन्ध ? यह तो अनैतिकता की पराकाष्ठा है।

लूसी को शेखर का संकोच बुरा लगता। शेखर जितना संकोच करता, उतना ही उसे प्राप्त करने की लालसा उसके मन में प्रवल हो उठती। एक दिन उसने प्रस्ताव किया, "मैं तुम्हारे बूढ़े अंकिल को डाइवोर्स करना चाहती हूँ। क्या तुम मुझसे शादी करोगे ?"

शेखर को जैसे बिजली छू गयी, वात टालता हुआ वोला, "फिर मुझे कव 'डाइवोर्स' करोगी ?"

"जव हम दोनों में से कोई भी, एक दूसरे से ऊब जाये ?" लूसी व्यंग्यपूर्वक मुस्कराती हुई वोली।

"मगर मेरे 'अंकिल' तो तुमसे अभी ऊबे नहीं प्रतीत होते हैं न ?" उसने पूछा।

"इससे क्या ? मैं ऊब गयी हूँ।" लूसी बोली, "बूढ़ा बेहद शक्की है, जलता है। उसे मेरी-तुम्हारी मित्रता बुरी लगती है। कल कह रहा था, तुम्हें यहाँ से निकाल देगा!"

शेखर के दिल को चोट लगी। वह मन-ही-मन बुदबुदाया, "मैं ही चला जाऊँगा, निकालने की जरूरत क्या ?"

उस दिन शेखर का किसी काम में मन नहीं लगा। सारा दिन वह दफ्तर में उदास बैठा फाइलें उलटता रहा। शाम की डाक से एक सुनहला निमन्त्रण-पत्र प्राप्त हुआ। छवि विश्वास की शादी कैप्टेन चटर्जी से हो रही है!...कमरे की हर चीज उसे घूमती नजर आयी।...तो फिर छवि भी गयी, परायी हो गयी ? अब वह किसके लिए भारत लौटे ? क्या रह गया है वहाँ, उसके लिए ?....

जमीन पर एक हरा कागज, मुड़ा हुआ...गिरा पड़ा था। शायद निमन्त्रण-पत्र के बीच से गिर गया था।

शेखर ने झुककर उठाया। वह डॉ० अनुराधा का पत्र था।

"डार्लिंग"

आज पूरे दो महीने हो गये, तुम्हारे पत्र का इन्तजार करते-करते। मगर, लगता है, तुम्हें लन्दन की रंगीन फिजा में भारत ही नहीं, हम सब भी याद न रहे। इन्तजार की भी कोई सीमा होती है।

छवि की शादी हो रही है। सात दिनों में तुम चाहो तो आ सकते हो। मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगी।

छवि परायी बन जायेगी, मगर मैं सदा तुम्हारी रहूँगी। इसलिए मैंने पिता-जी से कह दिया, आप मेरे विवाह की चिन्ता न करें। छवि मुझसे छोटी है तो क्या, उसके सुहागन बनने में मुझे कोई आपत्ति नहीं।

छवि इस विवाह से संतुष्ट नहीं दीखती। कल कह रही थी, दीदी...दुःख की आँच में ही तो जीवन का सोना तपता है। सुख तो ठण्ढी राख होता है, जिसमें

कुछ उगता नहीं, तपता नहीं। फिर क्यों तुम सब मुझे सुखी, सौभाग्यवती बनी देखना चाहते हो ?

पगली है। उसे क्या पता, पति क्या होता है ? सुख, तृप्ति, समर्पण··· वह क्या जाने ?

मैं तुम्हारे चरणों में समर्पित होने को ही प्रतीक्षारत हूँ। मुझे दुःख नहीं, सुख नहीं, सुख की चाह है। तुम्हें छवि के विवाह पर आना ही चाहिए। आओगे न ?···शायद तुम्हारी उपस्थिति से उसी सांत्वना व साहस प्राप्त हो।

तुम्हारी प्रतीक्षा में ही—

अनुराधा।"

न जाने क्या था, जो शेखर के मन-प्राण में कील की तरह चुभा। आँखों से एक आँसू टपके। पत्र गीला हो गया।

एक बूंद आँसू !

एक छवि का मुखड़ा उस हरे कागज पर तैरने लगा।

दो बूंद आँसू !

दो छवि सामने आ गयी।

टप्-टप्-टप् !

आँसू गिरने लगे। हर बूँद की सीपी से, मोती की तरह, छवि का श्यामल उदास मुखड़ा झाँकने लगा।

हर शब्द में छवि, हर बूँद में छवि !

शेखर को लगा, कुछ था उसका····जो आज टूट गया। इस टूटने में उसकी निर्मम उपेक्षा का ही मुख्य हाथ था।

छवि परायी बन जायेगी। विश्वास टूटकर, मिसेज चटर्जी बन जायेगी।

मन ने धिक्कारा—

"तुम रोते हो ! तुम्हें तो सुख चाहिए। सुख देने को डॉ० अनुराधा है, लूसी है····और बाजार में, गली-कूचे में, हर देश में, हर रङ्ग में, हर धर्म में, हर तरह की सुख की दुकानें सजी-सँवरी मिल जायेंगी ! तुम उनसे सुख लूटो न।

फिर क्यों रोते हो, एक मामूली-सी, घमण्डी, साँवली लड़की के लिए, जिसने तुम्हारी उपेक्षा क़ी।"

छवि के शब्द याद आये, "तुम सब रूप के लोभी हो, तुम बहेलिया हो! ....तुम्हारा काम रोज नया शिकार जाल में फँसाना है...!"

...नहीं छवि, नहीं। यह झूठ है। मुझे इस भ्रम-जाल से तुम्हीं निकाल सकती हो। ...तुम मेरी हो। तुम्हें मुझसे कोई नहीं अलग कर सकता। ... मैं आ रहा हूँ!

शेखर दृढ़-संकल्प से उठा। उसने दो तार दिये। एक छवि को, दूसरा डॉ० अनुराधा को।

छवि को लिखा—

"मैं आ रहा हूँ। तुम शादी से इन्कार कर दो। तुम्हारे बिना मैं जिन्दा नहीं रह सकता। तुम्हें मेरे प्यार को सौगन्ध।"

डॉ० अनुराधा को लिखा—

"अगर तुम मुझसे सचमुच प्यार करती हो, तो मुझे दुःखी नहीं देखना चाहोगी। मैं छवि के बिना नहीं रह सकता। तुम यह विवाह रुकवा दो। एक नहीं, दो जिन्दगी का सवाल है? क्या तुम अपनी प्यारी छोटी बहन के लिए इतना भी बलिदान नहीं दे सकती?"

× × ×

ट्रङ्क-काल कर छुट्टी की स्वीकृति प्राप्त की और अगले दिन की सीट बुक करा ली।

लूसी अवाक्!

इतनी जल्दी जाने की क्या पड़ी! शेखर ने उसे बताया, "मैं आज तक लड़कियों से सिर्फ खेलता और जी बहलाता रहा। मैं इसे स्वतन्त्रता की पराकाष्ठा समझता था। मैंने विवाह को हमेशा बन्धन समझा। मगर आज ऐसा लगता है, बिना घेरे में बँधे जिन्दगी टूट जायेगी। विवाह केवल शुष्क, बन्धन या जञ्जीर नहीं, दो दिलों को जोड़नेवाला पुल भी है।

"क्या तुम किसी से प्यार करते हो?" लूसी ने डूबते हुए स्वर में पूछा।

"हाँ लूसी, सच को झुठलाया नहीं जा सकता। मैं एक साँवली-सी, सीधी, मगर घमण्डी लड़की से प्यार करता रहा। मेरी जरा-सी उपेक्षा से वह तिलमिला उठी। नाराज होकर मुझसे बहुत दूर चली गयी। मैं इस निर्मम उपेक्षा को बर्दाश्त न कर सका। उससे बदला लेने के लिए, मैं उसकी सुन्दर बड़ी बहन से घनिष्ठता बढ़ाने लगा।···वह भाई की बीमारी का बहाना बनाकर, सैकड़ों मील दूर चली गयी। उसने मुझे कोई पत्र नहीं लिखा। ··· और इसी बीच मैं लन्दन चला आया।" शेखर ठण्ढी साँस लेता हुआ बोला।

"फिर ?"

"मैं लन्दन की रङ्गीनियों में बेसुध खो गया। मैंने उसे कोई पत्र लिखने की आवश्यकता नहीं समझी। मेरा स्वाभिमान मुझे झुकने से रोकता रहा। मेरे जीवन में लड़कियों की कमी नहीं रही। फिर उस साधारण-सी दीखनेवाली साँवली लड़की की खुशामद क्यों करूँ ?···मगर आज उसके विवाह का निमन्त्रण-पत्र प्राप्त कर, मेरा सारा स्वाभिमान धूल-धूसरित हो गया। वह परायी बन जायगी ? मैं उसे फिर कभी नहीं पा सकूँगा ··· इसकी कल्पना मात्र से मन सिहर उठा। लूसी, लड़कियाँ क्यों इतनी संगदिल होती हैं ?" कहते हुए शेखर ने पूछा।

लूसी के मुँह से अनायास निकला, "लड़कियाँ संगदिल नहीं होतीं, पुरुष उन्हें ऐसा बनने को मजबूर करता है। अगर तुम उसे सचमुच इतना प्यार करते थे, तो क्या एक पत्र लिखने में भी अपने को अपमानित महसूस करते ? लगता है, तुम उसे प्यार नहीं करते, केवल उस पर 'स्वामित्व' चाहते हो। जिस क्षण तुम्हें सूचना मिली, 'वह' किसी और की बनने जा रही है, तुम घबड़ा उठे। तुम 'प्यार' करते, तो शायद इतनी 'उपेक्षा' नहीं करते···!'

शेखर को लगा, किसी ने सीसा गर्मकर उसके कानों में डाल दिया है। वह तिलमिला उठा। लूसी सच ही तो कहती है। अगर वह छवि से प्यार करता, तो उसने उसे पत्र क्यों नहीं लिखा ? ···वह उसका प्रेमी नहीं, 'स्वामी' बनना चाहता है !

शेखर अपने को बहुत कमजोर अनुभव करने लगा। अगर छवि उसे स्वीकार न करे तो?

इस कल्पना-मात्र से वह सिहर उठा।

नहीं, छवि इतनी निष्ठुर नहीं है। वह मेरे प्यार को नहीं ठुकरा सकती।....

अनुराधा का पत्र याद आया।

"छवि इस विवाह से संतुष्ट नहीं। कल कह रही थी, दीदी...दुःख की आँच में ही तो जीवन का सोना तपता है। सुख तो ठंढी राख होता है, जिसमें कुछ उगता नहीं, तपता नहीं। फिर क्यों तुम सब मुझे सुखी, सौभाग्यवती बनी देखना चाहते हो?"

छवि क्यों दुःखी रहना चाहती है? उसे सुख से वितृष्णा क्यों? विवाह से अप्रसन्नता क्यों?

...कारण? वह है, शेखर, जिससे वह आज भी शायद उतना ही प्यार करती है, जितना पहले करती थी। वह उसी की प्रतीक्षा कर रही होगी। उसे जाना ही होगा।

शेखर की मुट्ठियाँ बँध गयीं।

दुनिया की कोई ताकत छवि को उससे नहीं छीन सकती। वह उसे अपनी बनाकर रहेगा।

× × ×

चलते वक्त पिता ने एकांत में कहा, "तुम-माँ से कुछ मत कहना।"

शेखर समझ गया। उसने पिता का चरण-स्पर्श किया।

हवाई-अड्डे पर लूसी भी उसे छोड़ने आयी थी।

"भारत पहुँच कर, मुझे पत्र जरूर लिखना। मैं तुम्हारी सफलता के लिए गिरजे में दुआ माँगूँगी!" ये शब्द कहते हुए लूसी की आँखें छलछला आयीं।

शेखर के जहाज में बैठने के बाद भी लूसी रूमाल हिलाती रही।

हवाई जहाज उड़ा। लन्दन भी छूट गया। हसरत-भरी निगाहों से शेखर ने झुककर लन्दन को देखा। विदा, लन्दन....अलविदा!....न जाने फिर कभी

इस धरती पर आना हो या न हो ! मगर यहाँ की कड़ुवी-मीठी यादें कभी भुलायी नहीं जा सकेंगी ।

दूर, बहुत दूर पीछे लन्दन छूटता चला गया । आगे, बहुत आगे, आसमान ने बादलों के बीच एक ही मुखड़ा झाँक रहा था, छवि विश्वास का····!

● ● ●

१४

वायुयान बादलों के ऊपर तैरता-सा उड़ता चला जा रहा था । शेखर की कल्पना भी पंख बाँधे उड़ी जा रही थी, असीम मुक्त गगन में ।

छवि, अनुराधा, लूसी····सभी चित्र आँखों के परदे पर लहर रहे थे । शेखर सोच रहा था—छवि सचमुच बहुत गर्वीली है । आखिर, उसे ही झुकना पड़ा । ऐसी लड़की के साथ विवाह कर क्या वह सुखी हो सकेगा ?····अगर छवि उसे प्यार करती, तो शाहद इतनी निर्मम उपेक्षा न करती ।

प्यार तो डाक्टर अनुराधा करती है । वह मेरी ही प्रतीक्षा कर रही है । उसने मेरे कारण ही विवाह से इन्कार कर दिया । बड़ी बहन होकर भी, छोटी बहन को पहले विवाह करने की अनुमति दे दी । कितना बड़ा त्याग है ?

शेखर को हँसी आयी ।

त्याग है या अपना स्वार्थ ?

अनु जानती है, मैं छवि से कितना प्यार करता हूँ । छवि का जल्दी विवाह कर वह अपने मार्ग का रोड़ा ही दूर करना चाहती है ।····नहीं, मैं यह होने नहीं दूँगा ! छवि मेरी है, उसे कोई मुझसे दूर नहीं कर सकता ।

इसी क्रम में अभिन्न सखा, रमेश याद आया। रमेश ठीक तो कहता है कि 'जीवन वहुत छोटा होता है। अगर उसे खतरनाक प्रयोगों में ही उलझा दोगे, तो मंजिल तक कैसे पहुँच पाओगे? प्रयोग के नाम पर तुम अपने लिए नयी राह बनाना चाहो, तो आपत्ति नहीं। मगर ऐसी 'राह' बनाने में जीवन क्यों नष्ट किया जाये, जिसकी कोई मंजिल ही न हो!'

छवि ही उसकी मंजिल है क्या? माँ को वहू चाहिए। छवि को पाकर वे खुश होंगी न।

मन शंकित हो उठा।

गोरी-चिट्टी, सुन्दर पंजाबिनों के मुकावले भला उस साँवली बंगालिन को पाकर वे कैसे खुश हो सकती हैं?

विवाह शेखर करेगा। अगर उसे साँवली लड़की पसन्द है, तो माँ को क्या? विवाह उन्हें नहीं करना है!....

मन-ही-मन शेखर, इसी उधेड़बुन में खोया रहा।

हवाई जहाज उड़ा चला जा रहा था, बादलों को चीरते, आगे....आगे.... वहुत आगे। दिल्ली के पालम अड्डे की ओर, जहाँ उसकी छवि है, अनुराधा हैं, और माँ हैं!!....

× × ×

पालम आया।

शेखर ने पहुँचने का तार सिर्फ डॉक्टर अनुराधा को दिया था। माँ को जान-वूझकर कोई खवर नहीं दी थी। वह एकाएक पहुँचकर माँ को चौंका देना चाहता था।

हवाई-अड्डे पर फूलों का हार लिये कोई उपस्थित न था।

शेखर का माथा ठनका। दिल घवड़ाने लगा! वह क्या करे? वापस लौट जाये? कहाँ? लूसी के पास। नहीं। एक वार छवि से मिलना ही होगा।

वह सिगरेट के कश-पर-कश खींचे जा रहा था।

सामान जहाज से उतरकर आ गया था। निराश व उदास शेखर, भारी कदमों से उधर वढ़ा। तभी अमृत की बूंद की तरह एक स्वर कानों में पड़ा, "सुनिये।"

शेखर को रोमांच हो आया। घूमकर देखा, छवि खड़ी थी।

एक पल शेखर को अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हुआ। छवि एकदम बदली हुई थीं। लगता था, हरसिंगार की गाछ, पानी के अभाव में मुरझा गयी हो।

शेखर भूल गया, पालम का हवाईअड्डा है। सैकड़ों भद्र स्त्री-पुरुष उन्हें देख रहे हैं। वह अपने को संयत न रख सका। दौड़कर उसने छवि को अपने बाहुपाश में जकड़ लिया, "तुम आ गयी छवि····!"

शब्द का स्थान अविरल अश्रु-धारा ने ले लिया था। दोनों की आँखों से गङ्गा-जमुना बह रही थी। मन का सारा कलुष बहा जा रहा था।····

आँसुओं की अविरल धारा ने, मन की अनजान परतों में कठोर हिम-खण्ड की भाँति जमी गर्व एवं संकोच की परतों को द्रवीभूत कर दिया था। शेखर रूमाल से छवि के आँसू पोंछकर आगे बढ़ा। उसकी बर्फ-सी ठण्ढी हथेलियाँ पकड़कर वह सीधे एक सोफे की ओर बढ़ा। कितना कुछ सोचा था छवि से कहने एवं उलाहना देने को, मगर इस वक्त सब कुछ भूल गया था। शब्द ही नहीं मिल रहे थे, भावों को प्रगट करने के लिए।

बहुत कठिनता से एक शब्द फूटा—'छवि !'

छवि की वाणी ही जैसे पंगु हो गयी थी। उसने नयनों की मूल भाषा में ही संकेत से पूछा, "क्या ?"

शेखर को पुरानी पढ़ी कविता की एक पंक्ति सहसा याद आयी—

"तुम्हारे ही नयन की मूक भाषा,
प्राण में घुलकर,
व्यथा में छंद,
मन में मूक पागल प्यार बनती है !"····

पुनः पूछा, "घर में सब ठीक हैं।"

"हाँ।"

फिर एक मौन।

शेखर ने दो कोकाकोला का आर्डर दिया।

छवि ने मौन तोड़ने का साहस किया, "लदंन में बहुत व्यस्त रहते थे क्या ? कभी मुझे दो लाइन लिखने की भी फुर्सत नहीं मिली ?"

शेखर ने प्रश्न का उत्तर ठेठ पंजाबी हँसी के साथ दिया—"ओहो, आपको भी कहाँ फुर्सत थी दो लाइन लिखने की ?"....

कोकाकोला आया। गले में तरावट आयी। छवि ने पूछा, "आपको दीदी का पत्र मिल गया था ?"

"हाँ !"

"आप फिर मेरे विवाह में सम्मिलित होने आये हैं ?" दर्द से भींगे स्वर में छवि ने साहस कर पूछा।

एक क्षण को शेखर स्तब्ध रह गया। फिर दृढ़ता से बोला, "बिना दूल्हे के भला विवाह हो सकता था, मुझे आना ही था !"

हृदय को चीर देनेवाले करुण शब्दों में धीरे-धीरे छवि फुसफुसायी—"उसके लिए तुमने बहुत देर कर दी।

"अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है !" शेखर ने भरे गले से कहा।

छवि फफककर रो पड़ी। हिचकियाँ लेती हुई कहने लगी, "नहीं, शेखर.... मुझे क्षमा करना। अब मैं कुछ नहीं कर सकती। तीन हजार कार्डों पर मेरे पति का नाम कैप्टेन चटर्जी छप चुका है। ढाई हजार से ज्यादा कार्ड बँट चुके हैं। पिताजी की इज्जत का सवाल है !"

शेखर पर जैसे बिजली गिरी। एक क्षण वह चुप रहा। फिर उसने पूछा, "छवि, एक बार कह दो कि तुम इस विवाह से खुश हो, मैं अगले जहाज से वापस लंदन चला जाऊँगा।

छवि चुप। कुछ नहीं बोली।

"तीन हजार नहीं, तीन लाख कार्ड पर भी नाम छप जाने से कैप्टेन चटर्जी तुम्हारे पति नहीं बन सकते। तुम्हारे दिल के कार्ड पर जब तक मेरा नाम जुड़ा है, दुनिया की कोई शक्ति, तुम्हें मुझसे जुदा नहीं कर सकती !" शेखर भावावेश में बोला।

"ठीक है, शेखर। मैं तुमसे प्यार करती हूँ···मगर मेरे पिताजी की इज्जत का क्या होगा ?"

इज्जत ! कैसी इज्जत ? जिस इज्जत की बुनियाद, प्यार-भरे दो टूटे दिलों की कब्र पर खड़ी हो, वह खोखली और निरर्थक होती है। संसार में प्यार से बड़ी कोई इज्जत नहीं हो सकती और दो दिलों के प्यार के बन्धन से मज़बूत कोई रिश्ता नहीं हो सकता ?" शेखर दृढ़ता से बोला।

"शेखर, तुम मुझे गलत मत समझो। मैं एक कमजोर लड़की हूँ। अपने पिता का कैसे विरोध करूँ ? समझ में नहीं आता····क्या करूँ ?" छवि बड़े करुण स्वर में हताशा के भाव से बोली।

अगर तुम पारिवारिक झूठी मान-मर्यादा की बलिवेदी पर बलि का बकरा बनना चाहो, तो ठीक है। तुम वापस लौट जाओ। मगर एक बात याद रखना, यह जीवन बहुत छोटा और बहुत मूल्यवान् होता है। मैं नहीं समझता, जो लोग अपना जीवन मिट्टी का समझकर, दूसरों के लिए बर्बाद करते हैं, उन्हें भगवान भी पुनर्जन्म प्रदान करता है या नहीं ?" शेखर धीरे-धीरे बोला।

"तुम्हीं बताओ शेखर, मैं क्या करूँ ? किधर जाऊँ! कुछ समझ में नहीं आता। छवि ने एक तरह से आत्मसमर्पण किया।

"तुम मेरे साथ चलो। इस संघर्ष में तुम अकेली नहीं हो, मैं भी तुम्हारे साथ हूँ।" शेखर ने संकल्प के साथ छवि की नाजुक कलाई पकड़ी। बोला, "बधी-बँधायी लीक पर तो सब चलते हैं। कुछ ही भाग्यवान अपने लिए खुद अपनी राह का निर्माण करते हैं। आओ, हम दोनों मिलकर····खुद अपना भविष्य बनाएँ !"

"चलो, कहाँ चलना है। "छवि उठती हुई बोली।

टैक्सी पर सामान रखकर शेखर बोला, "चलो, पहले अपनी माँ का आशीर्वाद ले लें !"

छवि को पुनः लगा, वह एक पतंग है, जिसकी डोर शेखर के हाथ में है। वह काँपते कदमों से टैक्सी में जाकर, शेखर के पास बैठ गयी।

टैक्सी भागी जा रही थी। दोनों चुप थे। छवि सोच रही थी, बिना सात फेरों के बन्धन के वह अपनी ससुराल पहली बार जा रही है। पता नहीं, वहाँ कैसा स्वागत हो !

शेखर सोच रहा था, कहीं माँ को यह कम खूबसूरत बंगालिन बहू स्वीकार न हो···तो ? देखा जाएगा।

घर आया। शेखर ने टैक्सी से चुप-चाप सामान उतारा और छवि को सामान के पास खड़ा कर, अन्दर गया।

"माँ !" माँ को कानों पर विश्वास नहीं। हजारों मील दूर लंदन से शेखर की आवाज, यहाँ तक कैसे आ सकती है ?

"कौन ?"

सामने शेखर खड़ा था। आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। खुशी से चिल्ला पड़ी, "तू आ गया बेटा ?"

"हाँ, माँ।" शेखर ने झुककर जननी के पैर छुए। माँ ने उसे प्यार से गले लगा लिया। आँख से सावन-भादों की झड़ी शुरू हो गयी। रागिनी भी खुशी से नाच उठी।

माँ ने शिकायत की "तू बहुत शरीर है। न खत, न तार। आने से पहले खबर तो दी होती !"

रागिनी ने पूछा, "भैया मेरे लिए लंदन से क्या लाये ?"

"बहुत सुन्दर चीज !"

'क्या, बताओ न !"

"भाभी !"

रागिनी खुशी से बच्चों की तरह फुदकती हुई बाहर भागी। वह बोलती जा रही थी, "भाभी आयी, भाभी !"

माँ नाराज होती बोली, "ले आया कोई मेम ? उससे मैं बातें कैसे करूँगी। अनपढ़ देशी माँ का ख्याल तो किया होता ?"

"माँ, वह अंग्रेजी मेम नहीं, हिन्दुस्तानी लड़की है ?"

तभी रागिनी बाहर से छवि को पकड़े लिये अन्दर आयी, "माँ, कितनी सुन्दर भाभी है, कितनी प्यारी।"

"माँ चिल्लायी, "कैसी लड़की है ? हर बात में इसे जल्दी रहती है। बाहर चल। बहू आयी हैं पहली बार घर में, और पगली ऐसे ही दहलीज के अन्दर ले आयी। बाहर चल, मैं पहले बहू की आरती तो उतार लूं, तेल तो दहलीज पर गिरा लूँ।

छवि ने झुककर माँ क चरण छुए। माँ के वर्षों के सपने साकार हुए। उसने कसकर बहू को गले से लगा लिया। सारी परम्परा एवं रूढ़ि, स्वागत की औपचारिक विधियाँ एक पल को विस्मृत हो गयीं।

शेखर बोला, "माँ, जब बाजे-गाजे के साथ तेरी बहू को डोली पर बैठाकर, ओ सॉरी, टैक्सी पर बिठाकर या दोस्त की मँगनी ली गयी मोटर पर बिठाकर लाऊँगा तो दहलीज पर एक किलो शुद्ध सरसों का तेल गिरा लेना व सौ दीपों से बहूरानी की आरती उतार लेना। इस वक्त जोर से भूख लगी है, खाने का इन्तजाम करो।"

माँ अवाक् ! पूछा, "क्या अभी शादी नहीं हुई ?"

"बिना तुम्हारे, शादी कर भी कैसे लेता ?" शेखर ने कहा।

चाय और नाश्ता आया। छवि संकोच से सिमटी जा रही थी। रागिनी ने पूछा, "भैया, भाभी को लन्दन से लाये हो ?"

"अरे नहीं।" शेखर मजाक करता हुआ बोला "बेचारी उदास—अकेले पालम पर खड़ी थी। मुझे दया आ गयी, उठाकर घर ले आया !"

छवि ने व्यग्रता से घड़ी देखी।

शेखर बोला, "नहाकर अभी आता हूँ !"

● ● ●

शेखर ने प्रस्ताव किया, "छवि, तुम वहीं रुको, मैं जरा तुम्हारी बड़ी वहन और तुम्हारे पिता से मिल आऊँ।"

"मैं भी साथ चलूंगी !" छवि बोली।

"क्यों ?"

"घर लौटना वहुत जरूरी है !"

शेखर कुछ सोचता हुआ बोला, "अच्छा, चल !"

माँ छवि से बहुत सारी बातें पूछना चाहती थी, मगर शेखर रुका ही नहीं।

दोनों टैक्सी पर चल दिये। दोनों का हृदय आशंका से काँप रहा था। न जाने क्या भवितव्य हो ? छवि के पिताजी इस प्रेम-विवाह की स्वीकृति भला क्यों देंगे ?

मन-मस्तिष्क में विचारों की आँधी चल रही थी। जाने क्या अनहोनी हो जाए ?

कमजोर पड़ते विचारों को सहारा देने के लिए छवि बोली, "शेखर, तुम मुझे अपने घर ले गये, यह ठीक नहीं हुआ।"

"क्यों ?"

"अगर कुछ दुर्घटना हो गयी तो माँ अपनी बहू को न पाकर मेरे या तुम्हारे प्रति न जाने क्या भावना बनाएँगी।" छवि काँपते स्वरों में बोली।

शेखर चुप। क्या उत्तर दे ?

डा० अनुराधा का बँगला आया। वह ड्राइङ्ग-रूम में एक सोफे पर बैठी, मेडिकल पत्रिका पढ़ रही थी। सामने शेखर को छवि के साथ खड़े देखकर, शॉक लगा। उसके सपने टूट गये। शेखर उससे नहीं, छवि से प्यार करता है।

छवि ? जो परायी हो जाएगी, शेखर से दूर, वहुत दूर···कैप्टेन चटर्जी के साथ चली जाएगी। फिर शेखर अकेला होगा। तब वह देखेगी, कौन शेखर को उससे छीनता है। खुशी से आँखें चमकीं।

"तुम आ गए शेखर। बैठो!" स्वागत करते अनुराधा बोली।

"आपका हवाई-अड्डे पर मैंने बहुत इन्तजार किया।" शेखर बोला।

"मैंने ही छवि को वहाँ भेजा था!"

"आप क्यों नहीं साथ आयीं?" शेखर ने पूछा।

शरारत एवं व्यंग्य से अनुराधा ने कहा, "इन्तजार का फल हमेशा मीठा होता है।"

शेखर सोफे में धँसता हुआ बोला, "डाक्टर, मैं ज्यादा इन्तजार नहीं कर सकता! मुझे आपकी सहायता चाहिए!"

अनुराधा की पलकों में सपनों के फूल लहर गये। आँखें चमकीं। बोली, "डाक्टर का काम ही क्या, रोगी की सहायता करना।"

"मैं आपके पिताजी से मिलना चाहता हूँ!"

शरारत से अनुराधा बोली, "इतनी जल्दी?"

"अगर जरा भी देर हो गयी, तो मर्ज लाइलाज हो जायेगा।" शेखर बोला।

"आपका मर्ज क्या है?"

"मैं छवि से शादी करूँगा!"

शेखर से यह उत्तर पाकर अनुराधा पर बिजली गिरी। उसके मन में पल्लवित होनेवाली आशा-लता समूल विच्छिन्न होकर, विचारों की आँधी के झोंके में उड़ने लगी।

उसने छवि को अकेले पालम, शेखर को समझाने के लिए भेजा था। मगर यह क्या? लगता है छवि ने शेखर से कुछ नहीं कहा।

"कहती भी क्यों?"

अनुराधा ने सोचा—मैं भी मूर्ख थी। मुझे, खुद पालम जाना चाहिए था। शेखर के पत्र से ही प्रकट था कि वह छवि को कितना चाहता है?....और मन-ही-मन पछताने लगी।

"शेखर, आज मैं तुम्हारी कुछ भी सहायता नहीं कर सकती। छवि अब परायी हो चुकी है। उसकी कैप्टेन चटर्जी से मँगनी हो गयी है। घर में उसके विवाह की तैयारी हो रही है।" अनुराधा रुक-रुककर धीरे-धीरे बोली।

"मैं तुम्हारे पिताजी से एकबार मिलना चाहता हूँ!" शेखर दृढ़तापूर्वक बोला।

"उनसे मिलकर तुम खुश नहीं होगे। वे कभी भी तुम्हारे प्रेम को अपना आशीर्वाद नहीं देंगे।" अनुराधा बोली।

"प्रेम को न आशीर्वाद की आकांक्षा होती है, न स्वीकृति की। प्रेम अपने-आप में पवित्रतम आत्मस्वीकृति है, प्रेम स्वयं महानतम आशीर्वाद है। मगर मैं उन्हें एकबार अपने निश्चय की सूचना दे देना आवश्यक समझता हूँ।" शेखर बोला।

संयोग की बात थी, उसी वक्त छवि को ढूंढ़ते उसके पिता वहीं आ पहुँचे।

मुँह में चुरुट दबाये ही बोले, "छवि, यू आर नेवर सीरियस। घर में तुम्हारी ससुराल से औरतें आयी बैठी इन्तजार कर रही हैं, आप यहाँ बैठी हैं। हरी अप, जल्दी करो, बाहर गाड़ी खड़ी है!"

पिता के समक्ष छवि की जबान को काठ मार गया।

अनुराधा ने साहस कर कहा, "डैडी, आप हैं मिस्टर शेखर! आज सुबह ही लन्दन से वापस आये हैं।"

शेखर ने उठकर हाथ मिलाया।

बूढ़ी कलाइयों में बहुत जोर था।

"हाऊ आर यू?"

"फाइन।"

"अरे भाई; पता नहीं तुम्हें डाक्टर ने आमन्त्रित किया या नहीं, मेरी लड़की की शादी हो रही है। आई इन्वाइट यू, तुम जरूर आना। यू मस्ट कम····!"

शेखर क्या जवाब दे।

"बाई द वे। क्या आप डाक्टर हैं?" मिस्टर विश्वास ने पूछा।

"नो, नो, मैं एक गरीब मरीज हूँ!" शेखर ने उत्तर दिया।

इस पर जोरों का ठहाका लगाते हुए मिस्टर विश्वास बोले, "ओह, आप तो बड़े ही दिलचस्प नवयुवक हैं।"

उनकी निर्द्वन्द्व हँसी से शेखर सहम गया। सोचने लगा—बात कहाँ से और कैसे शुरू करें ?

"मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता था। अगर आपके पास समय हो तो पाँच मिनट यहाँ बैठने की तकलीफ करें !" शेखर धीरे-धीरे बोला।

चुरुट से धुआँ छोड़ते हुए मिस्टर विश्वास सोफे पर बैठ गये।

"क्या बात करना चाहते हो ?"

"मिस्टर विश्वास, आप पढ़े-लिखे, सभ्य और सम्पन्न व्यक्ति हैं। भगवान ने आपको दौलत, इज्जत, नाम, यश सभी कुछ दिया है। क्या आप अपनी बेटी को दुःखी देखना चाहेंगे ?" इन शब्दों में धीरे-धीरे बात शुरू की।

"ओह, नो, नेवर··· !"

"छवि इस विवाह से खुश नहीं। आप यह विवाह रोक दीजिए !"

यह कैसे हो सकता है ? इम्पासिबुल। कैप्टेन में क्या कमी है ? क्या दोष है ? वह 'प्रेटी-हैण्डसम चैप' है। अच्छे खान्दान का है, अच्छी पोस्ट पर है, ब्राइट फ्यूचर हैं। छवि क्यों खुश नहीं है ?"

इसलिए कि वह मुझे प्यार करती है। "शेखर धीरे से बोला।

मिस्टर विश्वास पर वज्रपात हुआ। मुँह से केवल एक शब्द निकला, "ह्वाट !"

सब कुछ एक पल को शान्त हो गया। पृथ्वी रुक गयी। लगा, जैसे चेतना लुप्त हो गयी। शेखर के शब्द तीर की तरह मिस्टर विश्वास के कलेजे में चुभे।

"लव, प्यार····मोहब्बत···सब झूठ है, बकवास है। भारत में यह नहीं हो सकता। दिस इज़ नाट इङ्गलैण्ड ?" वह बड़बड़ाये।

"भारत में क्या लड़की को दिल नहीं होता ? उसे प्यार करने का अधिकार नहीं ?"

विश्वास गुस्से से लाल हो उठे। बोले मिस्टर, "तुम मुझे प्यार का उपदेश देने आये हो ? मैं जानता हूँ, प्यार का ड्रामा कहाँ से शुरू होता है और कहाँ खत्म होता है। हर गरीब नौजवान दौलत का भूखा होता है। वह हमेशा अमीर लड़की से प्यार का नाटक कर, उसके बाप की दौलत हड़पना चाहता है !"

शेखर को पीड़ा पहुँची। बोला, "आप मुझे गलत मत समझिये! मैं आपकी दौलत से नहीं, केवल छवि से प्यार करता हूँ। मुझे आपकी दौलत नहीं चाहिए!"

बीच में बात काटते हुए मिस्टर विश्वास बोले, "तुम्हे एक अनजान, भोली-भाली कुँवारी लड़की से प्यार करने का क्या अधिकार है?"

"इसलिए कि भारत, इङ्गलैंड नहीं बना। यहाँ किसी विवाहिता से रोमांस करना अनैतिक समझा जाता है!"

व्यंग्य से मिस्टर विश्वास मर्माहत होते हुए बोले, "मैं तुम्हारे बारे में कुछ भी तो नहीं जानता। तुम कौन हो, क्या करते हो, तुम्हारी जाति क्या है?"

"जहाँ तक जानकारी का सवाल है, आपको मेरे बारे में सब कुछ जानने का अधिकार है। मैं शेखर मेहरा हूँ। मेरे पिता लंदन में इण्डियन हाई-कमीशन में अधिकारी हैं। यहाँ डिफेन्स कालोनी में छोटा-सा अपना मकान है। माँ-बहन उसी मकान में रहती हैं। मैं नौकरी करता हूँ। हाल में मेरी कम्पनी ने मुझे अपना प्रतिनिधि बनाकर लंदन भेजा था। फिलहाल वहीं हूँ। शिक्षा-दीक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय में हुई। उम्र तीस-इक्तीस के बीच होगी, जन्मपत्री कभी बनवायी ही नहीं!...."शेखर ने बेतुकल्फी से इन शब्दों में अपना परिचय दिया।

"तुम पंजाबी हो?" मिस्टर विश्वास ने पूछा।

"जी हाँ, मैं पंजाबी हूँ!"

"तब तुम्हारा छवि से विवाह कैसे हो सकता है?"

"क्यों, क्या रुकावट है?"

"वह बङ्गाली है।"

"मिस्टर विश्वास, दिलों के रिश्तों में प्रांत, जाति, भाषा की दीवारें काम नहीं आती। हमारे लिए क्या यह गर्व की बात नहीं कि हम दोनों हिन्दुस्तानी हैं। प्रेम में संदेह से ज्यादा विश्वास ही है!"

"ठीक है, ठीक है।" चुरुट की राख झाड़ते, अपने बदरङ्ग होते चेहरे के भाव को छिपाते हुए मिस्टर विश्वास बोले, "अभी हमलोग इतने प्रोग्रेसिव नहीं

बने कि अन्तर्जातीय या अन्तर्प्रांतीय विवाह कर अपने रिश्तेदारों को नाराज करें।"

शेखर धीरे से बोला, "आपको अपनी बेटी से ज्यादा, रिश्तेदारों की नाराजगी का विचार है। संसार की कोई भाषा, इंसान को इन्सान से नफरत करना नहीं सिखाती।"

प्रशस्त्र ललाट के पसीने को रूमाल से पोंछते मिस्टर विश्वास बोले, "शेखर, आई एम सॉरी। मैं तुम्हारी कुछ भी मदद नहीं कर सकता। बात बहुत आगे बढ़ गयी है। यह शादी अब नहीं टाली जा सकती। यह मेरी प्रतिष्ठा का मामला है।"

"क्या आपकी प्रतिष्ठा आपक लड़की की जिन्दगी से भी ज्यादा कीमती है?"

शेखर के इस प्रश्न से छवि के पिता तिलमिला उठे। जरा कड़े स्वर में बोले, "यह तुम कैसे कह सकते हो? क्या कैप्टेन चटर्जी छवि को तुमसे ज्यादा सुखी नहीं रखेगा?"

"अच्छा होता, यह प्रश्न आप अपनी पुत्री छवि से ही पूछ लेते!" बड़ी संजीदगी से शेखर बोला।

"मैं उसका पिता हूँ। उसे मेरा हुक्म मानना ही होगा। वह शादी से इन्कार नहीं कर सकती!" मिस्टर विश्वास जरा तेज स्वर से बोले।

"अगर आपका अहं, अपनी पुत्री का बलिदान कर तुष्ट होता हो, तो आप ऐसा ही करें! मुझे कुछ नहीं कहना है!" शेखर बोला।

"एक लड़की को, सुन्दर, सुशिक्षित पति, अच्छा घर, अच्छी पोजीशन, सोसाइटी में नाम और इज्जत से ज्यादा भला और क्या चाहिए? कैप्टेन चटर्जी के साथ छवि को कुछ भी कमी न रहेगी!...."

छवि ने इस बार अपनी जबान खोली। बोली, "डैडी, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे तुम्हारी दौलत नहीं चाहिए। मुझे तुम केवल आशीर्वाद दो, मैं इनके साथ गरीबी में भी खुश रहूँगी!"

मिस्टर विश्वास के नेत्र सजल हो आये। बोले, "ठीक है छवि। जैसा तू चाहेगी, वैसा ही होगा। मेरा तुझ पर अधिकार ही क्या? अगर तुम शेखर के

साथ रहना चाहो, तो जा सकती हो। पार्लियामेंट ने कानून भी पास कर दिया है।
कोई बालिग लड़की अपनी मनपसन्द लड़के के साथ अदालत में जाकर 'सिविल
मैरेज' कर सकती है। मैं तुम्हारे, प्रेम-विवाह में बाधक नहीं बनूंगा !" फिर एक
पल रुककर बोले, "मगर एक बात याद रखना। जिन देशों में लड़कियों को
भारत से ज़्यादा आजादी है, वहाँ जितने प्रेम-विवाह होते हैं, उससे ज्यादा
'तलाक' भी होते हैं।"

छवि भी अपने आँसू न रोक सकी। फफककर रो पड़ी।

शेखर ने कहा "आप ठीक कहते हैं। मगर यह कैसे कहा जा सकता है,
जो लड़कियाँ माता-पिता की पसन्द के वर के साथ, उनकी इच्छा का आदर कर
डोली में बैठकर ससुराल जाती हैं, वे सब सुखी ही होती हैं। अगर उन्हें
तलाक लेने की आजादी नहीं होती, तो फिर गले में फाँसी का फन्दा लगाकर,
या आत्मदाह कर वे 'तलाक' प्राप्त कर लेती हैं। आप ही बताइए, कि आत्महत्या
और तलाक में कौन अच्छा है ?"

मानसिक तनाव की इस स्थिति ने मिस्टर विश्वास को जैसे भीतर से हिला
दिया। अचानक ब्लड-प्रेशर बहुत कम हो गया।

डॉ० अनुराधा ने दौड़कर पिता को सम्हाला। शेखर और छवि ने
भी सहायता की।

सारी एहतियाती कार्रवाइयाँ की गयीं, किन्तु मिस्टर विश्वास अचेत हो चुके
थे। अनुराधा ने अस्पताल में फोन किया। डाक्टर दौड़े आये। इंजेक्शन लगाया।

"हार्ट सिंक कर रहा है। कोई बहुत गहरा सदमा पहुँचा है।" डाक्टर बोले।

छवि घबड़ायी। यह क्या हो गया ? चारों ओर फोन किये जाने लगे।
खबर बिजली की तरह चारों ओर फैल गयी।

उदास छवि पिता के सिरहाने बैठी थी। शेखर समझ नहीं पा रहा था,
अब क्या होगा ?

कुछ देर बाद मिस्टर विश्वास को होश आया। धीरे-धीरे उनकी चेतना
वापस लौटी।

न जाने भीतर धीरे-धीरे क्या सुलग रहा था, जिससे अचानक बादल उमड़ आये और दोनों आँखों से आँसू टपकने लगे। दर्द से वातावरण भारी और बोझिल हो उठा।

डॉक्टर अनुराधा ने पिता के आँसू पोंछते हुए दिलासा दिया, "लड़की को विदा करने से पहले ही रोने लगे ?"....

आँसुओं को खुलकर बरसने का सम्मानजनक बहाना मिल गया। वृद्ध विश्वास मोशाय छोटे बच्चे की तरह फफक-फफककर रो पड़े। छवि भी अपने को रोक न सकीं। वह भी आँसुओं की बाढ़ में डूब गयी।

शेखर उस दर्द से भींगे वातावरण से घवड़ा उठा। न जाने मन में क्या चुभा, वह चुपचाप वहाँ से बाहर निकला और चल दिया।.......

वह पैदल चल रहा था, मगर उसके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। वह चैतन्य था, मगर दशा ऐसी हो रही थी, जैसे वह संज्ञाशून्य हो गया हो। उसका गला बुरी तरह सूख रहा था। जीभ तालू से चिपकी जा रही थी। मगर पानी की भी इच्छा शेष नहीं रह गयी। उसे लगा, शायद ऐसा ही कोई क्षण रहा होगा, जिससे "सिद्धार्थ' को वैराग्य की प्रेरणा प्राप्त हुई।

कौन कहता है, संसार में चारों ओर सुख का सागर हिलोरें लेता रहता हैं ? दुःख ही जीवन का शाश्वत सत्य है। सुख तो क्षणिक मृगमरीचिका है। कल तक वह अपने को संसार का सबसे सुखी एवं संतुष्ट व्यक्ति समझता था, लेकिन आज ?...

वह सोचने लगा—हाय, कितना कमजोर और बदनसीब होता है आदमी ? इसी क्रम में उसे हार्डी का उपन्यास 'मेयर आफ कैस्टरब्रिज' याद आया। उपन्यास का मूल सन्देश था—चरित्र ही भाग्य है !

उसने अनुभव किया, शायद मेरे चरित्र ने ही मेरी भाग्य-लिपि पर स्याही डाल दी।

'सुख'''सुख'''मुझे सिर्फ सुख ही की तलाश थी न !' शेखर को जैसे काँटा चुभा—'दुनिया में चारों ओर सुख की दुकानें खुली हैं। सुरा, सुन्दरी,

क्लब सभी सहज उपलब्ध हैं। सुख के साधन प्राप्त करने को पैसा भी है।··· मगर छवि विश्वास के बिना ये सारे 'सुख' कितने निरर्थक, कितने फीके और खोखले हैं ?

●●●

१६

शेखर रात जब घर पहुँचा, तो उसकी दशा एकदम विक्षिप्त-सी हो रही थी। रूखे बाल, लाल आँखें, सूखे होंठ···देखकर माँ घबड़ा गयी।

"अरे क्या हुआ रे ?" क्या हालत बना रखी है ?" घबड़ाहट-भरे स्वर में माँ ने पूछा।

पर, शेखर ने कोई उत्तर नहीं दिया। अपने कमरे में जाकर मसहरी पर बिना बूट-उतारे लेट गया। माँ ने माथे पर हाथ रखा। वह तवे की तरह जल रहा था। बोली, "अरे तुझे तो बुखार है ?"

माँ की कुछ समझ में नहीं आ रहा था। यह सब कैसे, क्या हो गया ?

"बहू कहाँ है ?" उसने पूछ ही लिया।

शेखर के दिल में कुछ चुभा और न चाहते हुए भी, आँखों के दोनों प्याले छलक उठे।

रागिनी भी घबड़ा उठी। बोली, "भैय्या, यह क्या हालत बना ली है ?··· कुछ तो बोलो। भाभी कहाँ है ?"

शेखर का गला भर आया। अपनी दुर्बलता छिपाने के लिए उसने तकिये में मुँह छिपा लिया।

तीन दिन इसी प्रकार वह बुखार में तड़पता रहा। दवा से कोई लाभ नहीं हुआ। चौथे दिन ज्वर कुछ हल्का हुआ।

शेखर को लगा, वह सुख की तलाश में जीवन की 'वास्तविक पूँजी' भी गँवा बैठा। आकाश के तारों को तोड़ने की महत्त्वाकांक्षा में, पृथ्वी के सुगन्धित पुष्पों को अनजाने ही उसने अपने पाँवों से मसल दिया। तारों के लोभ में उसने फूल भी गवाँ दिये!

छवि परायी हो जाएगी। हमेशा-हमेशा के लिए उससे दूर चली जाएगी। और फिर रह जाएगी, सिर्फ उसकी एक दर्द-भरी याद।

× × ×

शेखर का बुखार उतर गया।

उसने समय काटने के विचार से अखबार उठाया। तीसरे पृष्ठ पर एक नव-विवाहित युगल का चित्र छपा था। कैप्टेन चटर्जी के साथ, फूलों के गजरों के बीच, छवि का चित्र था।

रागिनी चाय लेकर आयी।

"तू भाभी के लिए बहुत परेशान थी न!" शेखर दर्द से भींगे स्वर में बोला, "यह देख, किसकी तस्वीर है?"

रागिनी ने प्याला रखकर, तुरत अखबार पकड़ा। छवि की तस्वीर देखते ही उसे भैय्या की बीमारी का राज समझ में आ गया। आँसू छिपाने के लिए वहाँ से भागी।

"माँ···माँ!" रागिनी भागते रसोई में पहुँची। माँ से बोली, "भाभी ने शादी कर ली।···यह देखो फोटो!"

"माँ की कुछ समझ में न आया। यह कैसा चक्कर है?

शेखर समझ नहीं पा रहा था कि वह छवि को कैसे बधाई दे?···फिर सोचा, इस औपचारिकता की भी क्या आवश्यकता? वह परायी हो गयी, हो जाने दो।

हिन्दुस्तान में सभी विवाह, लड़कियों से पूछकर नहीं किये जाते। लड़की तो वेजबान गाय होती है, चाहे जिस खूँटे से बाँध दो, वह 'विरोध' नहीं करती।

× × ×

अचानक रमेश याद आया। बहुत दिनों से उसका कोई पत्र नहीं आया था। लन्दन जाकर उसे पत्र लिखने की फुर्सत मुश्किल से मिल पाती थी। उसने गम गलत करने के लिए दोस्त को पत्र लिखना ही ठीक समझा—

"प्रिय भाई रमेश,

एक लम्बे अन्तराल के वाद मेरा पत्र प्राप्त कर तुम जरूर चौंकोगे। आज अचानक तुम बहुत याद आये, इसीलिए पत्र लिख रहा हूँ। तुम्हारी भविष्य-वाणी सच निकली।

आज जिन्दगी की वाजी हारने के वाद, मुझे लग रहा है, तुम्हारी बातों में सच्चाई थी।....सुख की तलाश में, भारत से इङ्गलैण्ड तक लम्बा चक्कर लगा आया। मगर मुझे 'सुख' कहीं नहीं मिला।

आज मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जलते हुए सोचता हूँ तो विश्वास नहीं होता—

"वही हम थे कि रोतों को हँसा देते थे।

अब वही हम हैं कि थमते नहीं आँसू अपने।"....

छवि अब परायी वन चुकी है। वह मुझसे बराबर 'प्यार' करती रही, मगर मुझे, तो 'अनियंत्रित', 'अमर्यादित', 'अभिनव', 'अद्वितीय' और 'अ-कल्पनीय' सुख की तलाश थी। इसलिए मैंने उसके निश्छल 'प्यार' को अपनी 'वासना' या तृष्णा से ज्यादा महत्त्व देने की आवश्यकता नहीं समझी।

....नयी राह वनाने की उमंग में मुझ पर अहं का भूत सवार था। छवि नहीं तो क्या, उसकी बहन डाक्टर अनुराधा ? वह नहीं तो कोई और ही सही। इस प्रकार मैं जिन्दगी की डाली से हर रंगीन एवं सुंदर फूल तोड़कर यह संतोष कर लेता, यही वास्तविक 'सुख' और 'तृप्ति' है।

मगर इंगलैण्ड जाकर मेरी आँखें खुलीं। वहाँ जीवन की जो नग्न तस्वीर देखी, तो मेरा 'सुख' का मायावी स्वप्न-महल, यथार्थ की आँधी के पहले ही झोंके से धूल-धूसरित हो गया।

मुझे लगा, 'सुख'····सुरा, सुंदरी या दौलत से नहीं प्राप्त किया जा सकता। ये सब मन बहलाने के सहज उपलब्ध 'साधन' मात्र हैं। इन्हें 'साध्य' समझना मूर्खता है और कोरा पागलपन।

सुख···बाहर किसी दुकान, बाजार, नगर, प्रांत, देश या विदेश में नहीं उपलब्ध हो सकता, वह तो हमारे पास, हमारे अन्तर में सहज उपलब्ध है।

संसार में सबसे अधिक सुखी वह इन्सान है, जिसे कोई प्यार करनेवाला हो या जिसके दिल में किसी के लिए प्यार का एहसास हो।

मगर निरन्तर नये प्रयोग कर टूटता, छीजता और बिखरता जब मैं जीवन के इस अनमोल 'सत्य' के निकट पहुँचा, तब तक बहुत देर हो चुकी थी।

····मैंने हिम्मत नहीं हारी। इंगलैण्ड छोड़ भागा, भारत आया। मगर किस्मत ने मेरी झोली में 'हरसिंगार के फूलों' की जगह काँटों-भरी नागफनी डाल दी।

छवि को खोकर भी मुझे इस बात का जरूर संतोष है कि उसने अपनी इच्छा एवं प्रसन्नता से विवाह नहीं किया। वह मुझसे प्यार करती है। यही विश्वास मेरी पूँजी है। इसे मैं खोना नहीं चाहता।

मुझसे विवाह करने को बहुत-सी लड़कियाँ उत्सुक हैं। छवि की बहन डाक्टर अनुराधा भी मुझ पर कम अनुरक्त नहीं। मगर मैं विवाह के लिए अब विशेष उत्सुक नहीं हूँ।

सुख से भी बड़ा दर्द होता है और ग़म का अपना ही सुख होता है।

'''थमते-थमते थमेंगे आँसू,
रोना है कोई हँसी नहीं !"

मेरे दोस्त, तुम मुझसे अच्छी किस्मत लेकर पैदा हुए। तुमने जीवन में कोई खतरनाक प्रयोग नहीं किया।···

मुझे अपने प्रयोग पर कोई पश्चात्ताप नहीं। मगर मुझे इसका दुःख जरूर है कि मैंने बिना 'मंजिल' की कल्पना के नयी राह बनाने का दिवास्वप्न पूरा करना चाहा।

शायद इसीलिए मुझे असफलता एवं निराशा हाथ लगी।

भाभी को प्रणाम, वच्चों को प्यार।

तुम्हारा,

शेखर !"

× × ×

पत्र डाक में पोस्ट करने के बहाने शेखर घर से शाम को निकला।

वही दिल्ली थी, वही डिफेन्स कॉलोनी··मगर कितनी वदली दीख रही थी।

लेटर-बाक्स में पत्र डालकर, वह टहलता हुआ आगे बढ़ा।

अँधेरा घना हो चुका था।

वस-स्टाप के पास एक लड़का फूलों के हार बेच रहा था। वह शेखर के पास दौड़ा आया। बोला, "बाबूजी, जूड़े में लगाने के हार सिर्फ पच्चीस पैसे में !"

फूलों के हारों के बीच एक चेहरा आँखों के सामने स्पष्ट हो आया—'छवि ···वही प्यारी छवि का !'

··· विश्वास नहीं हो रहा था, वह सचमुच परायी हो गयी।

"बाबूजी, एकदम ताजे फूल हैं, एक हार ले लीजिए न !" लड़का गिड़-गिड़ाने लगा।

शेखर क्या जवाव देता ? अब वहुत देर हो चुकी थी।

तभी एक स्कूटर आकर पास रुका।

युवक ने हार खरीदा। स्कूटर पर पीछे बैठी बीवी, शेखर की तरफ मुँह कर खड़ी हो गयी, नवयुवक उसके जूड़े में हार बाँधने लगा। शेखर को करेंट लगा। उसे लगा, जैसे सामने छवि खड़ी है और उसके जूड़े में कैप्टेन चटर्जी फूलों का हार प्यार से बाँध रहे हैं। वह फिर क्यों खड़ा है, किसलिए रुका है ?'

स्कूटर स्टार्ट हुआ। शेखर की तंद्रा टूटी। वह तेज़ कदमों से घर लौटने लगा।

छवि अपने पति के साथ स्कूटर पर घूमे या मोटर पर, उससे क्या ? उसे सब भूल जाना होगा।

कानों में लड़के के शब्द बार-बार गूँज रहे थे—"बाबूजी, एकदम ताजे फ़ूल ····हैं !"

हाँ; कुछ दिन पहले, वह भी इन ताजे, सुगन्धित फूलों का खरीदार था। मगर, अब उसे इनकी जरूरत नहीं रह गयी थी।

वगल की गली में शायद किसी का विवाह था। पूरी गली, दुल्हन की तरह सजी हुई थी। कागज के सफेद फूलों से बना वंदनवार वहुत आकर्षक लग रहा था।

शेखर,आगे बढ़ गया।

कागज के इन नकली फूलों में भले ही सुगन्ध न रहती हो तो क्या, ये जल्दी मुरझाते भी तो नहीं। ये कभी बासी नहीं होते। इन्हें खरीदना नहीं पड़ता, ये किराये पर भी मिल जाते हैं।

....दिल्ली में हर चीज किराये पर मिल जाती है, फूल ही नहीं, सुख के साधन भी।

'मगर शेखर को उसका खोया प्यार कैसे मिलेगा ?....''

किराये पर क्या, मुहमाँगा मोल देने पर भी शायद कभी नहीं, कहीं नहीं !!...

और सामने शेखर का घर आ गया।

शेखर कमरे में जाकर कुर्सी पर बैठ गया।

कुछ सोचकर जेव से पर्स निकाला। उसमें एक तस्वीर थी। उसके कोने पर लिखा था—'विद लव'...छवि विश्वास !'

दो पल चित्र हाथ में पकड़े कुछ सोचता रहा। फिर धीरे से उसका कोना फाड़ा, जिस पर छवि के हस्ताक्षर और 'विदलव' (प्यार के साथ) लिखा था। इस छोटे टुकड़े के कई टुकड़े कर, उसे हवा में उड़ा दिया।

आलमारी खोली।

किताबों के ढेर में, किसी किताब के वीच वह चित्र डाल दिया। आलमारी बन्द कर फिर आरामकुर्सी पर फैल गया।

'विदा...छवि।

अलविदा...प्यार !!'

और उसने पलकें मूँद लीं। उसने सोचा, आँखों के खारे पानी से पलकों के कैनवस पर जड़ा छवि का चित्र भी वह जायेगा, धुल जायेगा…सदा सर्वदा के लिए।

…मगर वह चित्र धूमिल नहीं पड़ रहा था।

आँखों की दो छोटी प्यालियों में भरे जल से क्या, सातों महासागर का जल भी, प्यार के एक छोटे-से चित्र को आज तक नहीं धो पाया है। सदियाँ बीत गयीं। सदियाँ बीत जायेंगी।

…समय की शिला पर रोज न जाने कितने चित्र उषा बनाती है, मगर निशा मिटा नहीं पाती। और इतने बड़े संसार में शेखर ही एक अकेला बदनसीब नहीं, जिसके 'प्यार का घरौंदा' उजड़ गया हो। रोज प्यार के शीशमहल टूटते हैं, टूटा करें।

संसार की गति नहीं रुकती। वह ऐसी ही चलता रहेगा। इसलिए शेखर की कहानी भी कभी समाप्त नहीं हो सकती।

वह रोता है, रोया करे।

आदमी शायद इसीलिए जन्म लेता है कि उसे एक दिन मरना होगा।

प्यार भी इसीलिए किया जाता है कि आँसुओं से उसकी कथा लिखी जा सके!

…अपने लिए नयी राह की कामना करनेवाले नये मुसाफिर, अक्सर नयी राहों की तलाश में मंजिल से भटक जाते हैं।

बगल के घर से रेडियो पर एक दर्द से भींगा स्वर हवा में तैरता आ रहा था—

'साहिल जो डुबो दे किश्ती को, उस साहिल की तमन्ना कौन करे।'

मुद्रक—भार्गव भूषण प्रेस, त्रिलोचन, वाराणसी।
२५/११-७६

